# इकाई–3
# अध्याय – 12
# पशुपालन एवं दुग्ध उत्पादन में पशु प्रबंधन का महत्व
# (Importance of Animal Management in Animal Husbandry and Milk Production)

पशुपालन का कार्य कई शताब्दियों से किया जा रहा है ऐसा अनुमान है कि उपयोगी पशु मनुष्यों द्वारा ईसा से 6000 वर्ष पूर्व से पाले जाते रहे हैं। आरम्भ में यह कार्य भोजन (मांस) प्राप्ति के उद्देश्य से किया गया परन्तु बाद में जैसे–जैसे पशुओं की उपयोगिता (महत्ता) का ज्ञान होता गया इन्हें कृषि कार्य, दूध, ऊन, चमड़ा, सवारी तथा बोझा ढोने आदि कार्यों के लिये भी पाला जाने लगा। भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही अर्थव्यवस्था कृषि पर ही आधारित रही है। वेदों (5000–3000 ई.पू.), पुराणों (2000–1000 ई.पू.) तथा अर्थशास्त्र (6000–3000 ई.पू.) में पशुपालन की व्यवस्था का विस्तृत वर्णन किया गया है। ऋग्वेद मे हवन सामग्री में घी के प्रयोग का उल्लेख मिलता है। कामधेनु गाय के विषय में भी कई प्राचीन लेख मिलते है। शिलालेखों तथा शिला चित्रकारी में नन्दी बैल के चित्र देखने को मिलते है।

प्राचीनकाल से ही भारतीय कृषि में पशुओं का विशेष योगदान रहा है । उस समय से ही अधिक पशुओं का होना सामाजिक प्रतिष्ठा का द्योतक माना जाता था तब पशुओं की उत्पादकता, अनुत्पादकता या उनको पालना लाभदायक है या नही, इन बातों पर कोई ध्यान नही दिया जाता था । अतः यह कहा जा सकता है कि उस समय पशुपालन का अर्थ केवल पशुओं को पालना ही था परन्तु आज के सन्दर्भ में पशुपालन की परिभाषा बदल चुकी है आज तो पशुपालन को व्यवहारिक विज्ञान की वह शाखा माना जाता है जो पालतू पशुओं को मितव्ययता पूर्ण तथा स्वस्थ रखने की कला का बोध कराती है। इस प्रकार पशुपालन विज्ञान के अन्तर्गत मुख्य रूप से पशु प्रजनन, पशु आहार, पशु आवास, पशुओ की देखभाल तथा पशुओं का स्वास्थ्य एवं चिकित्सा आदि का गहन व विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

वर्तमान युग को आर्थिक युग कहा जाता है क्योंकि अब लगभग सभी कार्यो को आर्थिक दृष्टि से आंका जाने लगा है । इसलिये अन्य व्यवसायों की तरह ही पशुपालन व्यवसाय का प्रमुख उद्धेश्य लागत को न्यूनतम करना तथा उत्पादन या लाभ अधिकतम प्राप्त करना ही है। इसके लिए यह आवश्यक है कि पशुपालक को पशु आहार, पशु–आवास, पशु–प्रजनन, पशुओं की देखभाल तथा उनके स्वास्थ्य, चिकित्सा एवं पशु नस्ल आदि की पूर्ण जानकारी हो साथ ही इन सभी को पर्याप्त एवं उचित महत्व दिया जाये। यदि इनमें से किसी एक को कम महत्व दिया गया तो हम अनुमानित लाभ प्राप्त नहीं कर सकेगें।

**प्रबंधन (Management) :** उपलब्ध संसाधनों का दक्षतापूर्वक तथा प्रभाव पूर्ण तरीके से उपयोग करते हुए लोगों के कार्यों में समन्वय करना ताकि लक्ष्यों की प्राप्ति सुनियोजित की जा सकें। प्रबंधन के अन्तर्गत आयोजन (Planning), संगठन निर्माण (Organizing) ,स्टाफिंग (Staffing), नेतृत्व करना (Leading or Directing) तथा संगठन अथवा पहल का नियंत्रण करना आदि आते है। "प्रबंधन यह जानने की कला है कि क्या करना है तथा उसे करने का सर्वोत्तम एवं सुलभ तरीका क्या है।" (एफ. डब्ल्यू. टेलर)

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि पशुपालन व्यवसाय की सफलता अच्छे एवं समुचित प्रबन्ध पर निर्भर करती है चूँकि पशुपालन का ही एक भाग दुग्ध उत्पादन है इसलिए पशुपालन एवं दुग्ध विज्ञान में प्रबन्ध के महत्व को निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है –

**पशु–आहार प्रबन्धन (Management of Animal Feeding) :** एक अच्छे पशुपालक को पशु आहार संबंधी निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

1. जहाँ तक सम्भव हो पशुओं के आहार में स्थानीय तथा सस्ते चारे सम्मिलित करें। इससे लागत कम करने में मदद मिलेगी ।
2. पशुपालक को प्रत्येक पशु की आहार सम्बन्धी आवश्यकता की पूरी जानकारी होनी चाहिए तथा उसी के अनुसार पशुओं को संतुलित आहार उपलब्ध कराना चाहिए ।
3. पशुओं को नियमित रूप से समय पर चारा एवं पानी उपलब्ध होना चाहिए ।
4. हरे चारे की मात्रा अधिक होने पर आवश्यकतानुसार चारे से 'हे' या साइलेज बनाकर संग्रह करना चाहिए।
5. पशुओं को हरे चारे की कुटटी काटकर ही खिलाना चाहिए इससे चारे में दूसरे खाद्य पदार्थ सरलता से मिलाये जा सकते है तथा चारे का अपव्यय भी कम होता है।
6. यदि जमीन उपलब्ध हो तो चारे व दाने को बाजार से खरीदने की अपेक्षा स्वयं उगाना सस्ता पड़ता है।
7. यदि चारागाह उपलब्ध है तो उसमें वैज्ञानिक तकनीक से

पशुओ को चराना चाहिए ताकि मृदा कटाव को बढावा न मिले।

8. पशुओं को चारा हमेशा नॉद में ही खिलाना चाहिए ।
9. पशुओं को जहाँ तक सम्भव हो हरा चारा ताजा ही खिलाना चाहिए। दाने का मिश्रण खिलाने से 1–2 घण्टे पूर्व तैयार करना चाहिए ।
10. सूखा चारा, कड़बी आदि को सूखे स्वच्छ स्थान पर ही संग्रह करना चाहिए ।
11. चारे की नॉद तथा पानी के बर्तन स्वच्छ रखने चाहिए?।

## पशु–आवास प्रबन्धन (Management of Animal Housing) :

1. पशु आवास की लम्बाई पूर्व–पश्चिम एंव चौड़ाई उत्तर दक्षिण में होनी चाहिए ।
2. पशु–आवास आस–पास के क्षेत्र से थोड़ा ऊँचे स्थान पर होना चाहिए जिससे कि जल–निकास की समुचित व्यवस्था हो सके।
3. पशु–आवास में पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकाश पहुँचना चाहिए ।
4. वायु संचार की समुचित व्यवस्था हो ।
5. आवास में स्वच्छ जल की पर्याप्त व्यवस्था हो ताकि पशुओं के पीने हेतु तथा सफाई का समुचित प्रबन्ध किया जा सके।
6. पशु–आवास में फर्श तथा नालियाँ आदि पक्की होनी चाहिये ताकि उनकी सफाई प्रतिदिन भली–भांति की जा सके।
7. पशु–आवास तक आने जाने का अच्छा रास्ता होना चाहिए ।
8. पशुशाला में पशुओं को पर्याप्त स्थान उपलब्ध हो ।
9. पशुशाला में पशुओं को पूर्ण आराम तथा सुरक्षा मिले।
10. भवन टिकाऊ तथा आकर्षक हो ।
11. पशुशाला तथा इसमें काम में आने वाले बर्तनों, उपकरणों आदि को रोगाणुओं से मुक्त रखना चाहिए ।
12. पशु–आवास में बीमार पशुओं की देखभाल एंव चिकित्सा के लिए अलग कक्ष की व्यवस्था होनी चाहिए।
13. पशुओं के मल–मूत्र तथा चारे आदि का संग्रह इस प्रकार करे कि उनसे दुर्गन्ध या गन्दगी दूध में न मिले तथा पशुशाला में गन्दगी न फैले ।

## पशु–प्रजनन प्रबन्धन (Management of Animal Breeding):

1. यदि कृत्रिम गर्भाधान विधि से प्रजनन कराना है तो भी ध्यान रखें कि उत्तम नस्ल के साँड का ही हिमीकृत वीर्य या तरल वीर्य प्रयोग करें ।
2. यदि गर्भाधान की प्राकृतिक विधि अपनाई जा रही है तो इस कार्य के लिए उत्तम नस्ल के स्वस्थ साँड का चयन करना चाहिए ।
3. मादा पशुओं के मदकाल की पहचान उनके बाहय लक्षणों के आधार पर अथवा नसबन्दी किये हुये साँड (टीजर बुल) को झुण्ड में छोड़कर कर लेनी चाहिए ।
4. मादा पशु के गर्भित कराने का सर्वोत्तम समय सामान्यतः मद में आने के 12 से 18 घण्टे के बीच का होता है।
5. प्रायः गाय भैंस तथा बकरी 19–21 दिन बाद तथा भेड़ 16–17 दिन बाद पुनः ऋतुमयी होने के लक्षण प्रकट करती है।
6. मादा के गर्भित होने के दो माह पश्चात् गर्भ की जांच कराकर पुष्टि कर लेनी चाहिए ।
7. यदि बछिया अथवा पाडी 3 वर्ष की आयु होने तक अथवा 300 कि0ग्रा0 वजन होने तक भी मदकाल के लक्षण प्रकट ना करे तो चिकित्सा जाँच कराकर उचित ईलाज कराना चाहिए ।
8. मुख्यतः गाय व भैंस ब्याने के दो–तीन माह के अन्दर ही मद में आ जाती है । यदि ऐसा न हो तो चिकित्सक से उनको औषधि या इंजेक्शन लगवाकर पशु को मद में लाना चाहिए अन्यथा उनका सूखा काल लम्बा होने से आर्थिक हानि उठानी पड़ेगी ।
9. पशु–प्रजनन संबंधी एक अभिलेख भी प्रत्येक पशुपालक को रखना चाहिए जिससे आवश्यक जानकारी समय पर प्राप्त की जा सके ।
10. मादा पशु के ब्याने के समय एक व्यक्ति का वहाँ उपस्थित होना अनिवार्य है जिससे कि आवश्यकता पड़ने पर वह पशु व शिशु की मदद कर सके या चिकित्सक को बुला सके ।

## पशु–स्वास्थ्य प्रबन्धन (Management of Animal Health) :

1. बीमार पशुओं को अन्य पशुओं से अलग कर दें तथा तुरन्त उनकी चिकित्सा का समुचित प्रबन्ध करें ।
2. पशुओं को समय–समय पर रोगों से बचाव के लिए टीके लगवाने चाहिए।
3. बीमार पशुओं के चारे–पानी के बर्तन आदि अलग रखें ।
4. पशुपालक को पशुओं की सामान्य बीमारियों एवं औषधियों की जानकारी होनी चाहिए ताकि छोटी–छोटी बीमारियों के लिए चिकित्सक के पास आने जाने में समय, श्रम व धन का दुरूपयोग न हो।
5. पशुशाला को बीमारियों के रोगाणुओं तथा परजीवियों से मुक्त रखने के लिए नियमित रूप से फिनायल के 1 से 2 प्रतिशत घोल से फर्श व नालियों को धोना चाहिए ।

6. पशुओं को स्वस्थ रखने के लिए उनके व्यायाम की समुचित व्यवस्था का प्रबन्ध होना चाहिए ।

**अन्य प्रबन्धन (Other Management):**

उपरोक्त मुख्य प्रबन्धनों के अतिरिक्त पशुपालक को पशुओं की देख भाल एवं नस्ल सम्बन्धी प्रबन्धन करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए:–

1. अनुत्पादक पशुओ की छँटनी कर देनी चाहिए जिससे कि उन पर होने वाला अनावश्यक व्यय न करना पड़े।
2. नये पशु खरीदते समय उनकी नस्ल, स्वास्थ्य तथा उत्पादकता का ध्यान रखें ।
3. पशुपालक को नवजात बच्चों, प्रसूता की देखभाल, गर्भित मादा की देखभाल, वृद्धि करने वाले बछड़ों, बछियों आदि की देखभाल का समुचित प्रबन्ध करना चाहिए ।
4. एक अच्छा पशुपालक आने वाले समय में कितना श्रम व धन आवश्यक होगा, यह अनुमान लगाकर उसकी पूर्व में ही व्यवस्था कर लेता है।
5. व्यवसाय प्रारम्भ करने व उसे संचालित करने के लिए धन की आवश्यकता होती है अतः एक कुशल प्रबन्धक को सरकारी योजनाओं तथा ऋण अनुदान आदि की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर समुचित व्यवस्था कर लेनी चाहिए।
6. जोखिम से बचने के लिए पशुओं का बीमा करा लेना चाहिए तथा प्रतिवर्ष इसका नवीनीकरण भी कराना चाहिए।
7. व्यवसाय के कुशल प्रबन्धन के लिए यह आवश्यक है कि फार्म पर आवश्यक अभिलेख रखे जायें । रिकार्ड रखने से किसी भी व्यवसाय में होने वाले लाभ या हानि का पता लगाया जा सकता है।
8. सामान्यतः पशु उत्पादों को अधिक समय तक संग्रह करके नही रखा जा सकता अतः उनको शीघ्र बेचने की व्यवस्था करनी चाहिए ।
9. व्यवसाय के सह–उत्पाद गोबर या गोबर की खाद, आहार की खाली बोरियों आदि के संग्रह एवं विपणन की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए ।
10. किसी भी व्यवसाय में सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि उद्यमी की व्यवसाय में पूर्ण निष्ठा हो तथा उसके साथ कार्य करने वाले व्यक्ति भी निष्ठावान हों ।
11. पशुपालन व्यवसाय की सफलता के लिए आवश्यक है कि अल्पकालीन या दीर्घकालीन योजनाएँ बनाकर उनका क्रियान्वयन किया जाये। योजनाओ में पशुओं की खरीद, बिक्री, संख्या, छँटनी आदि के साथ साथ सूखे व हरे चारे का क्रय–विक्रय, दाना कब, कहाँ से व कितना खरीदें, श्रमिकों की आवश्यकता व व्यवस्था आदि की उचित योजना तैयार कर लेनी चाहिए।
12. एक सफल व्यवसायी को अपने व्यवसाय से संबंधित तकनीकी ज्ञान को नवीनतम रखना भी आवश्यक है। इसके लिए समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, टेलिविजन, रेडियो, प्रदर्शनी, विज्ञापनों तथा संबंधित विभाग से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखना चाहिए ।
13. व्यवसाय में कई बार आग लगना, बीमारी का प्रकोप, चारे की समस्या, श्रमिक समस्या आदि कई अकाल्पनिक घटनाओं का सामना करना पड़ जाता है। अतः ऐसी स्थिति में पशुपालक को उचित निर्णय लेना आवश्यक होता है अन्यथा देरी से बहुत हानि हो सकती है।

इस प्रकार पशुपालन व्यवस्था में पशु–प्रबन्धन का अत्यधिक महत्व है। आज अन्य विकसित देशों की तुलना में हमारे देश में पशु–उत्पादों की प्राप्ति बहुत कम होने का एक प्रमुख कारण कुशल प्रबन्धन का अभाव है। अतः यदि हम उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर पशुपालन व्यवसाय करें तो निश्चित ही इस व्यवसाय से अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

## 12.1 गौ–उत्पाद (दूध, दही, घी, गौमूत्र, गोबर) का महत्व (Importance of Cow Products)

देश के विकास के लिए हमें अपने गाँवों को समृद्ध एवं सम्पन्न बनाना होगा। गाँवों की समृद्धि कृषि के विकास पर निर्भर करती है । कृषि का विकास पशुधन के विकास के बिना संभव नही है। अतः स्पष्ट है कि देश की उन्नति में पशुधन का भी महत्वपूर्ण योगदान है।

कृषि और पशुधन भारत की अनमोल सम्पदा है । वेद, उपनिषद्, बौद्ध–साहित्य , कौटिल्य का अर्थशास्त्र, महाभारत, मनुस्मृति, पुराण आदि से स्पष्ट है कि भारतीय कृषि में पशुओं का महत्वपूर्ण योगदान था। भगवान श्रीकृष्ण के गौ प्रेम एवं गौ पालन के कारण उनका नाम गोपाल है। आयुर्वेद में पंचगव्य शब्द का प्रयोग होता है, जो पांच महत्वपूर्ण गौ–वंशीय उत्पादों का उल्लेख करता है, ये उत्पाद है – दूध, दही, घी, गौ–मूत्र और गोबर । कई बीमारियों के उपचार के लिए इनका उपयोग या तो अलग–अलग किया जाता है या दूसरी जड़ी–बूटियों के साथ मिलाकर किया जाता है । समझा जाता है कि इनके गुण हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करते है।

वेदों में हवन सामग्री में घी के उपयोग का उल्लेख है। कामधेनु गाय के विषय में अनेक लेख मिलते है। शिलालेखों तथा शिलाचित्रकारी में नन्दी साँड के खुदे हुए अनेक चित्र शिव मन्दिर में मिलते है। भारतीय समाज में कई त्यौहार जैसे– बछबारस, गोवर्धन पूजा आदि में गाय व बैलों की पूजा की जाती है। जो पुरातन काल से पशु महत्व को इंगित करता है। वेदों में तो यहां तक कहा गया है कि गाय रूद्रों की जननी, वसुओं की पुत्री तथा आदित्यों की बहन एवं अमृतमयी है।

प्राचीनकाल से ही मनुष्य जीवन कृषि एवं पशुओं पर निर्भर रहा है। पशु मनुष्य के साथ भोजन की प्रतिस्पर्धा के बिना, कृषि के उपजात जैसे – भूसा, कड़बी आदि खाकर मानव जाति के लिए दूध, दही, घी जैसे बहुमूल्य पदार्थ प्रदान करता है। इनके अलावा मनुष्य को पशुओं से ईंधन, जैविक खाद, खाल, ऊन, बाल, मांस तथा कई अन्य उपयोगी पदार्थ मिलते हैं।

प्राचीनकाल से ही व्यक्ति की समृद्धि एवं सम्पन्नता गौ–धन से आंकी जाती थी, जिसके पास जितनी ज्यादा गाय वह उतना ही धनवान माना जाता था। परिवार का भरण–पोषण गाय पर ही निर्भर करता था। खेतों को जोतने के लिए बैल गाय से ही मिलते थे, दूध, दही एवं घी की आपूर्ति तो होती ही थी, गोमूत्र एवं गोबर भी उपयोगी माने जाते थे। गोमूत्र में ऐसे औषधीय गुण हैं, जो हृदय रोगों में लाभकारी हैं। गाय का गोबर खाद के रूप में प्रयोग करने पर जमीन की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि होती है।

गाय के दूध, दही, घी, गोमूत्र एवं गोबर को सामूहिक रूप से पंचगव्य कहा जाता है। आयुर्वेद में इसे औषधी की मान्यता है। पंचगव्य शरीर में रोग निरोधक क्षमता को बढ़ाकर रोगों को दूर करने में सहायक है। गोमूत्र में प्रति ऑक्सीकरण की क्षमता के कारण डीएनए को नष्ट होने से बचाया जा सकता है। गाय का गोबर चर्म रोगों की रोकथाम में उपयोगी है। दही एवं घी के पोषण मान की उच्चता से सभी परिचित है, दूध का प्रयोग विभिन्न प्रकार से भारतीय संस्कृति में पुरातन काल से ही होता आ रहा है। घी का प्रयोग शरीर की क्षमता को बढ़ाने एवं मानसिक विकास के लिए किया जाता है। दही में सुपाच्य प्रोटीन एवं लाभकारी जीवाणु होते हैं जो भूख को बढ़ानें में सहायता करते है। पंचगव्य का निर्माण देशी, मुक्त वन विचरण करने वाली गायों से प्राप्त उत्पादों द्वारा ही करना चाहिए।

**दूध–** दूध को एक पूर्ण भोजन माना गया है। इसमें सभी प्रकार के आवश्यक पोषक पदार्थ उपस्थित होते है जिनका उपयोग सभी आयु वाले मनुष्य अपने शरीर की आवश्यकता की पूर्ति के लिए करते है।

"दूध एक स्वच्छ और ताजा लैक्टियल स्राव है, जिसको एक या अधिक स्वस्थ तथा ठीक प्रकार से पोषित गाय को पूरे दोहने से प्राप्त किया गया है, और इसमें वह दूध सम्मिलित नही है जो बच्चा देने से 15 दिन पूर्व तथा 10 दिन पश्चात् का है, तथा इस दूध में कम से कम 8.5 प्रतिशत वसा रहित ठोस पदार्थ (एस. एन. एफ.) और 3.25 प्रतिशत वसा उपस्थित है।"

**दूध का रासायनिक संघठन–**

विभिन्न स्तनधारियों का रासायनिक संघठन निम्न तालिका में प्रस्तुत है–

**तालिका–** विभिन्न स्तनधारियों के दूध का रासायनिक संघठन

| स्तनधारी | पानी (%) | ठोस पदार्थ (%) | वसा (%) | प्रोटीन (%) | लैक्टोज (%) | खनिज लवण (%) | वसा रहित ठोस पदार्थ (%) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| गाय | 86.61 | 13.19 | 4.14 | 3.58 | 4.96 | 0.71 | 9.25 |
| भैंस | 82.76 | 17.24 | 7.38 | 3.60 | 5.48 | 0.78 | 9.86 |
| बकरी | 87.00 | 13.00 | 4.25 | 3.52 | 4.27 | 0.86 | 7.75 |
| भेड़ | 80.71 | 19.29 | 7.90 | 5.23 | 4.81 | 0.90 | 11.39 |
| मनुष्य | 87.43 | 12.57 | 3.75 | 1.63 | 6.98 | 0.21 | 8.82 |

**दही का संघठन (Composition of Dahi)**

| अवयव | पूर्ण दूध का दही (प्रतिशत) | स्किम्ड दूध का दही (प्रतिशत) |
|---|---|---|
| जल | 85.0 – 88.0 | 90.0 – 91.0 |
| वसा | 5.0 – 8.0 | 0.05 – 0.10 |
| प्रोटीन | 3.2 – 3.5 | 3.3 – 3.5 |
| लैक्टोज | 4.6 – 5.2 | 4.7 – 5.3 |
| भस्म | 0.70 – 0.75 | 0.70 – 0.75 |
| लैक्टिक अम्ल | 0.5 – 1.1 | 0.5 – 1.1 |
| कैल्शियम | 0.12 – 0.14 | 0.12 – 0.14 |
| फास्फॉरस | 0.09 – 0.11 | 0.09 – 0.11 |

पोषक तत्व शरीर की वृद्धि तथा बीमारी से बचाव की शक्ति पैदा करते हैं। गाय के दूध में इन पोषक तत्वों की मात्रा अत्यन्त संतुलित होती हैं। इसी कारण भैंस के दूध की तुलना में गाय के दूध के पोषक मूल्य को अधिक महत्त्व दिया गया है और वेद–शास्त्रों में इसे अमृत की संज्ञा दी गई है। भारतीय नस्लों की गायों का दूध अधिक गुणकारी है जिसमें A–2 किस्म प्रोटीन की एवं कन्जूगेटेड लिनोलिक एसिड होता है, जिसकी प्रकृति धमनियों में रक्त जमाव विरोधी, कैंसर विरोधी एवं मधुमेह विरोधी होती है, इसलिए देशी गाय का दूध दोहरा लाभदायक है, वहीं भारतीय गाय के दूध में बच्चों के दिमाग की वृद्धि करने हेतु आवश्यक तत्व ओमेगा थ्री फेटी एसिड एवं सेरेब्रोसाईड आवश्यक अनुपात में पाया जाता है।

**दही–** डेवीज के अनुसार दही का पौषण मान दूध के समान ही है। दही में वे सभी अवयव उपस्थित है जो कि दूध में पाये जाते है। दही में वसा, प्रोटीन तथा खनिज लवण की मात्रायें दूध के समान है जबकि लैक्टोज की मात्रा कुछ कम होती है।

दही में उत्पन्न होने वाली अम्लीयता के कारण कैल्शियम तथा फास्फॉरस अधिक घुलनशील अवस्था में आ जाते है। इसलिए दूध की अपेक्षा इन तत्वों की अधिक मात्रायें दही से मनुष्य को मिलती है। दही का पाचन मनुष्य में दूध की अपेक्षा शीघ्रता से होता है।

दही में चिकित्सा सम्बन्धी गुण भी दूध की अपेक्षा बहुत अधिक है। इसका प्रयोग बीमार मनुष्यों के लिए अधिक लाभदायक होता है। दूध में विशेषकर गर्मियों के दिनों में कोलीफार्म (Coliform)बैक्टीरिया पैदा हो जाते है जो कि आंतों में गैस बनाते है। दही के प्रयोग से बैक्टीरिया की ये सब क्रियाएँ समाप्त हो जाती है। यही कारण है कि दही का प्रयोग पेचिस वाले मनुष्यों में अधिक लाभदायक है।

घी–गाय के घी का उपयोग कृषि में विशेष रूप से पंचगव्य बनाने में किया जाता है। इसी तरह गाय के घी को औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। गाय के घी में 99–99.5 प्रतिशत वसा, विटामीन ए एवं अन्य तत्व पाये जाते है।

### गौ–मूत्र

संसार में कोई ऐसा जीव नही है जिसका मल–मूत्र उपयोगी हो, परन्तु गाय का मूत्र औषधि के रूप में माना जाता है। वर्तमान में गौ–मूत्र का अर्क बनाकर प्रयोग अधिक सरल और कारगर है। गांवों में अपने घरों में गौ–मूत्र का छिड़काव करने से घर पवित्र हो जाता है अर्थात् नकारात्मक ऊर्जा समाप्त हो जाती है। पूजा–पाठ के समय गौ–मूत्र का छिड़काव कर घर को पवित्र किया जाता है। गौ–मूत्र में कई प्रकार के तत्व होते हैं जो शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त गौ–मूत्र का प्रयोग कृषि में जैविक कीटनाशी, पंचगव्य आदि में किया जाता है।

**गोबर–** गाय के गोबर को खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस खाद से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। गाय के गोबर से उपले (कण्ड़ें), अगरबत्ती, मूर्तियां एवं कच्चे घरों की दीवारों एवं फर्श की लिपाई की जाती है।

पशुपालन कृषि विज्ञान की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत पालतू पशुओं के विभिन्न पक्षों जैसे आहार, आवास, स्वास्थ्य एवं प्रजनन आदि का अध्ययन किया जाता है। इस विज्ञान में हम विभिन्न प्रकार के पशुओं की नस्लों का अध्ययन, उनके पालन पोषण के संबंध में पूर्ण ज्ञान प्राप्त करते है। पशुओं को आदर्श और संतुलित भोजन किस प्रकार दिया जाना चाहिए यह भी हमें पशुपालन के अंतर्गत ही बताया जाता है। पशुपालन विज्ञान से हमें पशु जाति के सुधार हेतु किये जा रहे नवीनतम प्रयासों की भी जानकारी प्राप्त होती है। इस विज्ञान के अंतर्गत पशु चिकित्सा विज्ञान भी आता है जिसमें पशुओं के विभिन्न रोगों का अध्ययन एवं रोगोपचार का ज्ञान कराया जाता है। अतः पशुपालन विज्ञान, पालतू पशुओं के पालन–पोषण, स्वास्थ्य रक्षा, पशु संवर्धन एवं सुधार, पशु–आवास हेतु समुचित प्रबंधन का ज्ञान कराने वाला विज्ञान है। पशुपालन विज्ञान पशुओं को पालने की वह कला है, जिसमें पशुओं को स्वस्थ रखते हुए उनसे लाभदायक उत्पाद प्राप्त कर सके ।

### महत्वपूर्ण बिन्दु (Important Points)

1. शुरू में पशुओं को माँस प्राप्ति के उद्देश्य से ही पाला जाता था, बाद में विभिन्न उद्देश्यों जैसे दूध प्राप्ति, ऊन, चमड़ा, खेती करने के लिए तथा सामान ढोने व सवारी करने आदि के लिए पशुओं को पाला जाने लगा ।
2. अनुमान है कि मनुष्य द्वारा ईसा से लगभग 6000 वर्ष पूर्व से पशुओं को पाला जा रहा है।
3. प्राचीन काल में जहाँ पशुपालन से आशय केवल पशुओं को पालने से ही था वही आजकल पशुपालन विज्ञान के अन्तर्गत पशु–प्रजनन, पशु आहार, पशु–आवास, पशुओं का स्वास्थ्य एंव चिकित्सा तथा पशुओं की देखभाल एवं नस्ल आदि की विस्तारपूर्वक जानकारी शामिल है।
4. पशुपालन व्यवसाय की सफलता कुशल प्रबन्धन पर ही निर्भर करती है।
5. पशुपालन व्यवसाय में अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि उत्तम नस्ल के पशु खरीदें, मादा पशु समय पर गर्भ धारण करें, उन्हें संतुलित आहार मिले, उनके आवास, सुरक्षा एवं आराम की व्यवस्था करें जिससे पशुओं का स्वास्थ्य उत्तम रहें। इसके अलावा उन्हें स्वच्छ वातावरण मिलना भी आवश्यक है।

6. एक पशुपालक में कुशल प्रबन्धक के सभी गुण होने चाहिए ।
7. पशु मानव के लिए महत्वूर्ण है, क्योंकि इनसे बहुमूल्य पदार्थ दूध, ऊन, मांस आदि प्राप्त होते है। पशुओं का गोबर कृषि हेतु उपयोगी है।
8. गाय के गोबर एंव गौ मूत्र में औषधीय गुण है।
9. पशुओं के पालन–पोषण, स्वास्थ्य रक्षा, पशु संवर्धन एंव सुधार, पशु–आवास एवं पशु नस्ल हेतु समुचित प्रबंधन के लिए पशुपालन विज्ञान का ज्ञान आवश्यक है।
10. पशुपालन कृषि विज्ञान की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत पालतू पशुओं के विभिन्न पक्षों जैसे आहार, आवास, स्वास्थ्य एवं प्रजनन आदि का अध्ययन किया जाता है।

## अभ्यासार्थ प्रश्नः–

### बहुचयनात्मक प्रश्न –

1. किसी भी व्यवसाय का प्रमुख उद्देश्य है –
   (अ) लागत को कम से कम करना
   (ब)उत्पादन को अधिक से अधिक करना
   (स)उपर्युक्त दोनों
   (द)उपर्युक्त में से कोई नहीं
2. गाय, भैंस तथा बकरी में मदकाल के लक्षण कितने दिनो बाद पुनः प्रकट होते है
   (अ)16 से 17 दिन (ब)19 से 21 दिन
   (स)उपर्युक्त दोनों (द)उपर्युक्त में से कोई नहीं
3. सर्वप्रथम मनुष्य द्वारा पशुओं को पालने का उद्देश्य था–
   (अ) वस्त्र प्राप्ति (ब) भोजन प्राप्ति
   (स) सवारी करना (द) बोझा ढोना
4. मनुष्य द्वारा पशु ईसा से कितने वर्षो पूर्व से पाले जाते रहे है –
   (अ) 2000 वर्ष (ब)3000 वर्ष
   (स)4000 वर्ष (द)6000 वर्ष
5. गाय से हमें कौन–कौन से उत्पाद प्राप्त होते है –
   (अ) दूध (ब)दही व घी
   (स) गोबर एवं मूत्र (द)उपरोक्त सभी

### अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

6. मादा पशु के गर्भित कराने का उपयुक्त समय लिखो ।
7. गाय एंव भैंस ब्याने के कितने दिनो बाद मदकाल के लक्षण प्रकट करती है ?
8. प्राचीन काल में माँस प्राप्ति के अलावा पशुओं को और किन–किन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाला जाता था? लिखिए ।
9. प्राचीन काल में सामाजिक प्रतिष्ठा का द्योतक किस बात को मानते थे ?
10. चारे को किन–किन रूपों में संग्रह करके रखा जा सकता है ?नाम लिखो ।
11. मादा पशु के गर्भ ठहरने की जाँच कब करवानी चाहिए ?
12. दूध की परिभाषा लिखिए।

### लघूत्तरात्मक प्रश्न –

13. पशुपालक को प्रजनन सम्बन्धी किन–किन बातों की जानकारी होनी चाहिए?लिखिए ।
14. पशुओं के आहार का प्रबन्ध करते समय किन–किन बातो को ध्यान में रखेंगें?लिखिए ।
15. पशुपालक को पशुओं के लिए आवास–व्यवस्था करते समय किन–किन बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए?
16. पशु–स्वास्थ्य प्रबन्धन का सविस्तार वर्णन कीजिए ।
17. 'पंचगव्य' शब्द का क्या अर्थ है ?
18. पशुपालन विज्ञान को परिभाषित कीजिये ।
19. पशु रोगों का अध्ययन एंव उपचार किस विज्ञान के अन्तर्गत आते है ?
20. पशुओं का धार्मिक महत्व बताईये ।
21. दूध को अमृत की संज्ञा क्यों दी गई है।

### निबन्धात्मक प्रश्न –

22. पशु प्रबन्धन के महत्व को विस्तार पूर्वक समझाइये।
23. गौ–उत्पाद के महत्व का वर्णन कीजिए।
24. पशु प्रबन्धन में पशु स्वास्थ्य एवं पशु प्रजनन की भूमिका का वर्णन कीजिए।

### उत्तरमाला

1. स 2. ब 3. ब 4. द 5.द

# अध्याय–13
# नस्लें (Breeds)

### 13.1 गाय की नस्लें (Breeds of Cow) :

पशुपालन कृषि व्यवसाय के साथ जुड़ा हुआ मुख्य व्यवसाय है। हमारे यहाँ प्राचीनकाल से पशुधन को विशेष महत्व दिया जा रहा है। गाय एक महत्वपूर्ण जानवर है जो संसार में प्रायः सर्वत्र पायी जाती है। भारतीय गाय से उत्तम किस्म का दूध प्राप्त होता है। इसलिए हिन्दू गाय को माता (गौमाता) मानते हैं। इसके बछड़े बड़े होकर गाड़ी खींचते हैं व खेतों की जुताई करते हैं। राष्ट्रीय पशु अनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल (हरियाणा) के अनुसार भारतीय गायों की 40 नस्लें पायी जाती है जिन्हें उपयोगिता के आधार पर तीन वर्गो में बांटा गया है।

1. दुधारू नस्ले (Milch Breeds) : साहीवाल, सिन्धी, गिर, राठी, देवनी।
2. द्विकाजी नस्लें (Dual Breeds) : थारपारकर, कांकरेज, हरियाणा, अंगोल, डांगी, पंगानूर, देवली, मेवाती, गाबलाब, सीरी, राठी, कृष्णाघाटी, निमाड़ी।
3. भारवाही नस्लें (Draft Breeds) : नागौरी, मालवी, कंगायम, अमृत महल, खिल्लारी हल्लीकर, बच्चौर, खेरीगढ, पंवार, बरगुर, कैनकथा, गंगातीरी।

उपरोक्त नस्लों के अतिरिक्त केरल प्रदेश में कम ऊंचाई एवं छोटे आकार की वैचूर नस्ल की गाय पायी जाती है जिसे मिनिएचर गाय कहते है। भारतीय नस्लों के अलावा विदेशी गायों की नस्लें निम्नलिखित है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | ब्राउनस्वीस | – | स्वीटजरलैण्ड |
| 2. | जर्सी | – | जर्सीद्वीप |
| 3. | आयरशायर | – | स्कॉटलैण्ड |
| 4. | गर्नशी | – | गर्नसी द्वीप |
| 5. | शार्ट होर्न | – | इग्लैंड |
| 6. | रेडडेन | – | डेनमार्क |
| 7. | होलस्टीन फ्रीजियन | – | हॉलैण्ड |

इनके अतिरिक्त भारत के राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान करनाल में संकर प्रजनन द्वारा गायों की कुछ संकर नस्लें तैयार की है, जैसे –

1.करनफ्रिज
2.करनस्वीस

### 1. गिर

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान काठियावाड वन क्षेत्र है यह नस्ल जूनागढ़, भावनगर एवं अमरेली जिलों में पाई जाती है, गिर नस्ल राजस्थान के अजमेर व भीलवाड़ा जिलों में पाई जाती है।

2. **विशेषताएं (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग लाल, सफेद जिस पर काले कत्थई व सफेद धब्बे होते हैं, शरीर सुडोल, भारी, कान लम्बे, लटकते हुए, माथा चौड़ा व उभरा हुआ सींग लम्बे व मोटे–मोटे, गर्दन लम्बी व पतली तथा अयन पीछे तक फैला हुआ होता है। गिर गाय का भार 380 से 450 कि.ग्रा तथा नर का भार 550 से 650 कि.ग्रा होता है।

गिर

3. **उपयोगिता (Utility)**– गिर नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 1500–1800 लीटर प्रति ब्यांत होता है जिसमें औसत वसा 4.5 प्रतिशत होती है।

### 2. थारपारकर

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)** – इस नस्ल का मूल स्थान पाकिस्तान में सिंध प्रदेश का थारपारकर क्षेत्र है यह नस्ल गुजरात के कच्छ के रन क्षेत्र में पाई जाती है, थारपारकर नस्ल राजस्थान के जैसलमेर, बाड़मेर व जोधपुर जिलों में पाई जाती है।

थारपारकर

2. **विशेषताएं (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग सफेद या धूसर (हल्का भूरा) होता है शरीर मध्यम, सुगठित, ललाट चौड़ा, कान लम्बे, नथूने चौडे, सींग मध्यम, गर्दन पतली लम्बी, कूबड उठा हुआ तथा अयन

पूर्ण विकसित होता है, थारपारकर गाय का भार 380 से 400 कि.ग्रा. व नर का भार 450 से 500 कि.ग्रा. होता है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– थारपारकर नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 1600–2000 लीटर प्रति ब्यांत होता है बैल जुताई करने व गाड़ी खींचने के काम में लाये जाते हैं।

### 3. हरियाणा

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान हरियाणा क्षेत्र है यह नस्ल रोहतक, हिसार, करनाल, गुडगांव, दिल्ली व पंजाब में पाई जाती है हरियाणा नस्ल राजस्थान में अलवर, भरतपुर व हरियाणा से लगे क्षेत्र मे पाई जाती है।

हरियाणा

2. **विशेषताएँ (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग सफेद या हल्का भूरा होता है शरीर सुडौल, सुगठित व सुदृढ़, कान छोटे व लटकते हुए, थूथन काला व नथूने चौडे, सींग लम्बे व पतले, गर्दन मजबूत लम्बी व खूबसूरत, कूबड उठा हुआ तथा अयन बड़ा व थन मध्यम आकार के होते है। हरियाणा नस्ल की गाय का भार 360 कि.ग्रा. व नर का भार 500 कि.ग्रा. होता है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– हरियाणा नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 1000 से 1500 लीटर प्रति ब्यांत होता है बैल जुताई करने व गाड़ी खींचने के लिए अच्छे माने जाते हैं।

### 4. नागौरी

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान राजस्थान मे जोधपुर व नागौर जिला है यह नस्ल राजस्थान मे जोधपुर, नागौर जिला व उससे लगे समीपवर्ती क्षेत्रों में पाई जाती है।

नागौरी

2. **विशेषताएं (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग प्रायः सफेद व धूसर होता है शरीर सुगठित व शक्तिशाली, कान लम्बे, पीठ सीधी, गर्दन मजबूत, सींग मध्यम आकार के अन्दर की और झुके हुए, छाती चौड़ी, पैर सीधे व मजबूत, कूबड उठा हुआ, तथा अयन सामान्य होता है। नागौरी गाय का भार 400 कि.ग्रा. व नर का भार 500 कि.ग्रा. होता है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– नागौरी नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 600 से 900 लीटर प्रति ब्यांत तथा बैल कृषि कार्य व गाड़ी खींचने के लिए उत्तम माने जाते हैं।

### 5. मालवी

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान मध्य प्रदेश का मालवा क्षेत्र (जिला मन्दसौर, रतलाम, उज्जैन) है। मालवी नस्ल राजस्थान के चितौडगढ़, बासवाड़ा व झालावाड जिलों में पाई जाती है।

मालवी

2. **विशेषताएँ (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग लोहा सा धूसर या हल्का सफेद होता है शरीर गठीला व छोटा, सींग छोटे व मोटे , कान छोटे चौकन्ने खडे हुए, गर्दन व टांगे छोटी तथा मजबूत होती है, मालवी गाय का भार 300 से 450 कि.ग्रा. तथा नर का भार 450 से 500 कि.ग्रा. होता है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– मालवी नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 700 से 900 लीटर प्रति ब्यांत होता है तथा बैल कृषि कार्य के लिए उपयुक्त माने जाते हैं।

### 6. मेवाती

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान

मेवाती

हरियाणा व राजस्थान को मेवात क्षेत्र माना जाता है, मेवाती नस्ल राजस्थान के अलवर, भरतपुर, जिलों में पाई जाती है।

2. **विशेषताएं (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग सामान्यतः सफेद होता है परन्तु सिर, गला व कन्धे पर हल्का काला रंग भी पाया जाता है, शरीर मध्यम व ढीला ढाला, नथूने चौड़े, चेहरा लम्बा, सींग मध्यम व पीछे की और मुड़े हुए, कान छोटे व खड़े हुए, गर्दन छोटी व उठी हुई होती है गाय का अयन छोटा होता है। मेवाती गाय का भार 300 से 350 कि.ग्रा. तथा नर का भार 375 से 425 कि.ग्रा. होता है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– मेवाती नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 800 से 1000 लीटर प्रति ब्यांत होता है तथा बैल कृषि कार्य के लिए शक्तिशाली व तेज माने जाते हैं।

### 7. राठी

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान राजस्थान का पश्चिमी क्षेत्र माना जाता है यह नस्ल राजस्थान के जैसलमेर, गंगानगर व बीकानेर जिलों मे पाई जाती है।

राठी

2. **विशेषताएं (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग हल्का सफेद हल्का लाल के रंग जैसा काले या लाल धब्बेदार होता है, शरीर ढीला ढाला मध्यम आकार का चेहरा चौड़ा, त्वचा ढीली, सींग छोटे व मोटे, गर्दन छोटी, गलकम्बल लटकता हुआ बड़ा तथा पूंछ लम्बी होती है, राठी गाय का भार 350 से 380 कि.ग्रा. व नर का भार 500 से 550 कि.ग्रा. होता है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– राठी नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 1200 से 1500 लीटर प्रति ब्यांत होता है जिसमें वसा प्रतिशत 4 से 4.5 प्रतिशत होती है तथा बैल खेती के काम आते हैं।

### 8. जर्सी

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान इंग्लिश चैनल का जर्सी द्वीप समूह माना जाता है यह नस्ल भारत व राजस्थान में भी अधिक दूध उत्पादन के लिए पाली जाती है।

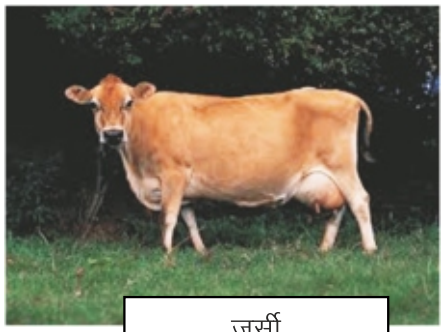
जर्सी

2. **विशेषताएं (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग हल्का लाल, बादामी, सफेद या लाल धब्बेदार होता है, शरीर लम्बा कूबड रहित, चेहरा चौड़ा कम लम्बाई का, कान बड़े, गर्दन छोटी, सींग छोटे, मध्यम लम्बाई के होते है अयन बड़ा, पूर्ण विकसित होता है। इस नस्ल की गाय जल्दी युवा हो जाती है। जर्सी गाय का भार 450 से 500 कि.ग्रा. होता है तथा नर का भार 600 कि.ग्रा. से 750 कि.ग्रा. होता है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– जर्सी नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 4000 से 4200 लीटर प्रति ब्यांत होता है जिसमें वसा प्रतिशत 4.5 से 5 प्रतिशत होती है तथा बैल कृषि कार्य के लिए अच्छे नही माने जाते हैं।

### 9. हॉलस्टीन–फ्रीजियन

1. **उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin and distribution)**– इस नस्ल का मूल स्थान हालैण्ड (नीदरलैण्ड) माना जाता है यह नस्ल दुनिया भर में दूध उत्पादन के लिए प्रसिद्व है तथा भारत व राजस्थान में भी बहुतायत में पाली जाती है।

हॉलस्टीन

2. **विशेषताएँ (Characteristics)**– इस नस्ल के पशुओं का रंग काला व बड़ी–बड़ी सफेद चित्तियो वाला होता है, शरीर आकार बड़ा, कूबड रहित, चेहरा बड़ा, सींग छोटे–छोटे या सींग रहित, सिर के ऊपर का भाग उभरा हुआ, कान मध्यम, अयन बड़ा थैले जैसा पूर्ण विकसित होता है। होलस्टीन–फ्रीजियन गाय का भार 600 से 650 कि.ग्रा. तथा नर का भार 900 से 1000 कि.ग्रा. होता है यह सबसे भारी नस्ल है।

3. **उपयोगिता (Utility)**– हॉलस्टीन फ्रीजियन नस्ल की गाय का दूध उत्पादन 5000 से 6000 लीटर प्रति ब्यांत होता है जिसमें वसा प्रतिशत 3.5 से 4 प्रतिशत होती है तथा बैल कृषि कार्य के लिए अच्छे नही माने जाते है।

## 13.2 भैंस की नस्लें (Breeds of Buffalo)

संसार की कुल भैंसो का लगभग 95 प्रतिशत एशिया महाद्वीप मे है। भारत में अधिकांश भैंसे ग्रामीण क्षेत्रों के पशुपालकों द्वारा पाली जाती है। भैंस को मुख्य रुप से दुग्ध उत्पादन तथा नर भैंसो (पाडा) कृषि कार्य करवाने के लिए पाला जाता है। विश्व की समस्त भैंसो को मुख्य रुप से दो वर्गो में बांटा गया है:–

1.अफ्रीकन

2.एशियन :– जंगली

पालतू :–रीवर

स्वैम्प

एशियन भैंस को पुनः दो वर्गो, जंगली और पालतू में वर्गीकृत किया गया है। पालतू एशियन को पुनः रीवर और स्वैम्प भैंसो के रुप में जाना जाता है। रीवर भैंसे मुख्य रुप से अधिक दूध देने वाली (1300–2000 लीटर 300 दिन में) होती है रीवर भैंसे भारत, पाकिस्तान तथा मध्य पूर्वी एशियाई देश जैसे यूनान, इटली, दक्षिण पूर्वी यूरोप तथा यू.एस.एस.आर. में पायी जाती है जबकि स्वैम्प भैंस बर्मा, मलेशिया, सिंगापुर, लाओस, कम्बोडिया, इन्डोनेशिया, फिलीपीन्स, थाईलैण्ड, वियतनाम, चाइना, ताइवान, हांगकांग तथा दक्षिणी पूर्वी एशिया के अनेक भागों में पायी जाती है। राजस्थान में भैंसों की संख्या 12.97 मिलियन है। भारत दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में प्रथम स्थान रखता है, वैज्ञानिकों ने भैंस को ''ब्लैक डायमण्ड'' भी कहा है। अतः पशुपालक भैंस की अच्छी नस्ल सम्बन्धी उन्नत तकनीकि जानकारी प्राप्त करके ही भैंस पालन व्यवसाय को बढावा दे सकते है। हमारे देश में भैंस की 13 नस्लें पायी जाती है। भैसों की नस्लों को उनके आकार के अनुसार निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. भारी श्रेणी (Heavy breed) मुर्रा, जाफराबादी एवं नीली रावी

2. मध्यम श्रेणी (Medium breed) मेहसाना, भदावरी एवं नागपुरी

3. हल्की श्रेणी (Light breed) सूरती

### मुर्रा (Murrah)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** इस भैंस का मूल स्थान पश्चिमी उत्तरप्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब है। रोहतक, हिसार, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, गुजरात के अनेक भागों में पायी जाती हैं। यह उत्तरी राजस्थान के जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, कोटा एवं अजमेर संभाग में पायी जाती हैं।

**विशेषताएं (Characteristics) :** (1) इसका सिर छोटा व सींग छोटे एवं जलेबी के घेरे जैसे घुण्डीदार मुड़े हुए आकर्षक होते हैं। (2) इस नस्ल के पशु काले रंग के होते हैं परन्तु मुँह, पैर, पूँछ पर सफेद धब्बे पाये जाते हैं। (3) पशु का शरीर भारी किन्तु त्वचा मुलायम होती है। (4) अयन विकसित जिस पर थन छोटे एवं दूर–दूर होते हैं। यह विश्व की दूध देने वाली भैंसो की श्रेष्ठ नस्ल है। इसके नर पशुओं का शरीर भार 500–600 किग्रा. तथा मादा पशुओं का भार 500–550 किग्रा. होता है तथा प्रथम ब्यांत की उम्र 36–48 माह है।

**उपयोगिता (Utility) :**

दुग्ध क्षमता :– 1800–2500 लीटर प्रति ब्यांत

दूध मे वसा :– 7 प्रतिशत

मुर्रा भैंस

### भदावरी (Bhadawari)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** उत्तर प्रदेश के आगरा जिले का भदावर स्थान इसका मूल स्थान है। इसके अतिरिक्त यमुना–चम्बल की घाटी में बसे इटावा व ग्वालियर क्षेत्रों में पाई जाती है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इस पशु की मुख्य विशेषता तांबे जैसी लालिमा लिये बादामी रंग हैं। शरीर मध्यम आकार का व आगे से पतला एवं पीछे से चौड़ा होता हैं। सींग चपटे, मोटें तथा पीछे की ओर मुड़कर ऊपर अन्दर की ओर मुड़ें होते हैं। अयन छोटा होता है, जिस पर दुग्ध शिराएँ उभरी रहती हैं। इसके नर पशुओं का शरीर भार 400–450 किग्रा. तथा मादा पशुओं का भार 350–400 किग्रा. होता है तथा प्रथम ब्यांत की उम्र 48–54 माह है।

**उपयोगिता (Utility) :**

दुग्ध क्षमता :– 900–1200 किग्रा. प्रति ब्यांत

दूध में वसा :–12–14 प्रतिशत

भदावरी भैंस

## सूरती (Surti)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** यह मूल रुप से गुजरात के आनन्द, नाडियाद, बड़ौदा तथा खेडा क्षेत्र से हैं। इस नस्ल की भैंस दक्षिण राजस्थान में पाई जाती है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** यह मध्यम आकार, भूरा या हल्का काला रंग, सींग छोटे दँराती (हँसिया) की आकृति के व चपटे होते हैं। इनकी प्रमुख विशेषता यह है कि पशु के जबड़े के नीचे तथा अधरवक्ष पर सफेद रंग की एक–एक पट्टी होती है। इसकी पीठ सीधी होती है तथा त्वचा मोटी होती है। अयन सुविकसित जो पीछे के पैरों में वर्गाकार रूप में स्थित होते हैं। इसके नर पशुओं का शरीर भार 450–500 किग्रा. तथा मादा पशुओं का भार 350–400 किग्रा. होता है तथा प्रथम ब्यांत की उम्र 42–48 माह है।

**उपयोगिता (Utility) :**

दुग्ध क्षमता :–1600–1700 किग्रा. प्रति ब्यांत

दुध मे वसा :– 7.5 प्रतिशत

सूरती भैंस

## नीली (Nili)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** यह पंजाब के फिरोजपुर व अमृतसर के नीली रावी तथा सतलज नदियों के क्षेत्र में पाई जाती हैं। सतलज नदी का पानी नीला हैं इसीलिए इस भैंस का नाम 'नीली' रखा गया। इसके अतिरिक्त यू.पी. के बरेली, मुरादाबाद व उत्तराखंड के रामपुर, नैनीताल जिलों में बहुतायत से मिलती हैं।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** शरीर का रंग अधिकतर काला कभी–कभी भूरा भी मिलता हैं। माथे, चेहरे, थूथन तथा पैरों पर सफेद चिन्ह होते हैं। पशु मध्यम आकार के खुरदरे व भारी सिर वाले होते हैं। पूँछ भूमि को छूती हुई लम्बी व पतली जिसका अंतिम भाग गुच्छेदार व सफेद होता है। अयन सुविकसित, जिस पर कभी–कभी गुलाबी धब्बे पाये जाते हैं। इसके नर पशुओं का शरीर भार 580–600 किग्रा. तथा मादा पशुओं के शरीर का भार 400–450 किग्रा. तथा प्रथम ब्यांत की उम्र 40–48 माह है।

**उपयोगिता (Utility) :**

दुग्ध क्षमता :– 1500–1800 किग्रा. प्रति ब्यांत

दूध में वसा :– 8–10 प्रतिशत

नीली

## जाफराबादी (Jaffarabadi)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** इसका मूल स्थान गुजरात के गिर जंगलों तथा काठियावाड़ और जाफराबाद हैं।

**विशेषताएँ Characteristics) :** पशु का शरीर भारी भरकम तथा लम्बा होता हैं। रंग काला एवं इसका माथा भारी तथा उठा हुआ होता हैं। सींग चौड़ें तथा गर्दन की तरफ झुके होते हैं। सींग के आगे का भाग गोल छल्लेदार होता हैं। इसके नर पशुओं का भार 500–600 कि.ग्रा. तथा मादा पशुओं का भार 450–500 कि.ग्रा. होता है तथा प्रथम ब्यांत की उम्र 42 से 48 माह है।

**उपयोगिता (Utility) :**

दुग्ध क्षमता :– 900–1100 कि.ग्रा. प्रति ब्यांत

दूध में वसा :– 7–9 प्रतिशत

जाफराबादी

### मेहसाना (Mehsana)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** गुजरात के मेहसाना, बनासकांठा व सावरकांठा जिलों में मूल निवास हैं। यह राजस्थान के जालौर जिले में भी पाई जाती है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** यह नस्ल मुर्रा नर व सूरती भैंस के प्रजनन से प्राप्त हुई है। यह मध्यम आकार, सींग कुछ चौड़ें एवं अन्दर की तरफ मुड़ें हुए होते हैं। रंग काला एवं गर्दन लम्बी एवं सुन्दर होती है। अयन विकसित होता है। इसके नर पशुओं का शरीर भार 500–550 किग्रा. तथा मादा पशुओंका भार 400–475 किग्रा. होता है तथा प्रथम ब्यांत की उम्र :– 40–48 माह है।

**उपयोगिता (Utility) :**

दुग्ध क्षमता :– 1200–1700 किग्रा. प्रति ब्यांत

दूध में वसा :– 7–8 प्रतिशत

मेहसाना

## 13.3 बकरी की नस्लें (Breeds of Goat)

बकरी पालन भूमिहीन मजदूरों और छोटे एवं सीमान्त किसानों के जीवन निर्वाह का प्रमुख स्त्रौत है। बकरियों से दूध, मांस, खाल, बाल और खाद जैसे उत्पाद प्राप्त होते हैं। हमारे देश के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी बकरी की उपयोगिता पहचान कर ही इसे गरीब आदमी की गाय का नाम दिया है। बकरी वातावरण की विपरीत परिस्थितियों में वनस्पतियों व झाड़ियों की पत्तियाँ खाकर भी जीवित रह सकती है। इसलिए सूखा ग्रस्त व पहाड़ी इलाकों मे भी बकरी पालन आसानी से किया जा सकता है। बकरी की आवश्यकताएँ एवं देखभाल अन्य किसी भी पशु की अपेक्षा कम और आसान है। राजस्थान में बकरियों की संख्या 21. 66 मिलियन है। भारत में बकरी की 20 नस्लें उपलब्ध है। **बकरी को रेगिस्तान का चलता–फिरता ''फ्रीज' या रनिंग डेयरी एवं डबल एटीएम भी कहते है, क्योंकि इससे कभी भी दूध निकालकर ताजा ही उपयोग ले सकते है।** राजस्थान में बकरियों की तीन प्रमुख नस्लें पाई जाती है। सिरोही, मारवाड़ी, झकराना एवं झालावाड़ी।

### जमुनापारी (Jamunapari)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** उत्तर प्रदेश का इटावा जिला इस नस्ल का मूल उत्पत्ति स्थान माना जाता है। इस नस्ल की बकरियाँ यमुना तथा चम्बल नदी के बीच के क्षेत्र में अधिकांशतः पाई जाती हैं। इस नस्ल के शुद्ध वंशीय पशु उत्तर प्रदेश के इटावा जिले के चक्रनगर, सहासन गांव के आसपास के क्षेत्र में पाये जाते हैं।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** जमुनापारी बकरियाँ बड़े आकार की होती है। इनका माथा चौड़ा और उठा होता है। इसके कान लम्बे लटके हुये एवं चौड़े होते हैं। मुँह लम्बा, नाक रोमन, सींग छोटे एवं चपटे होते हैं। इनके शरीर का रंग एक–सा नही होता परन्तु प्रायः सफेद शरीर जिस पर भूरे, काले या चमड़े के रंग के धब्बे हो सकते है। टांगे लम्बी होती है। पिछली टांगो पर लम्बे घने बाल होना इस नस्ल की विशेषता है। वयस्क बकरे का शरीर भार 90 किग्रा. तक तथा बकरी का शरीर भार 60 किग्रा. तक होता है।

जमुनापारी

**उपयोगिता (Utility) :** इस नस्ल के पशु दुग्धोत्पादन तथा मांसोत्पादन के लिये पाले जाते हैं। इस नस्ल के पशु कठोर तथा ग्रामीण इलाको में पालने के लिये उपयुक्त रहते हैं। 250 दिन के दुग्ध काल में बकरियाँ 360 से 544 किलोग्राम तक दूध देती हैं। जिसमें औसतन 3.5 – 5.0 प्रतिशत दुग्ध वसा होती है।

### बरबरी (Barbari)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** बरबरी नस्ल का मूल उत्पत्ति स्थान पूर्वी अफ्रीका के ब्रिटिश सोमानिया का बरबरा क्षेत्र माना जाता है। इस नस्ल के पशु दिल्ली, हरियाणा के गुडगाँव करनाल तथा उत्तर प्रदेश के एटा, मथुरा, आगरा, अलीगढ में पाये जाते हैं।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इस नस्ल का रंग सफेद भूरा जिस पर कत्थई या काले धब्बे होते हैं। इसके कान छोटे हिरनी जैसे, पैर छोटे एवं हडिडयाँ सुन्दर होती हैं। इस

नस्ल के पशु बाँधकर घर पर पालने के लिये खास तौर पर शहरों के लिये उपयुक्त है। इस का अयन विकसित तथा थन लम्बे होते हैं। वयस्क बकरे का शरीर 38 किग्रा. तथा बकरी का शरीर भार 23 किग्रा. तक होता है।

बरबरी

**उपयोगिता (Utility) :** ये बकरियाँ प्रतिदिन औसत 1 से 1.25 किग्रा. दूध देती हैं। जिसमें 4.5 – 5.0 प्रतिशत वसा होती है। इस नस्ल की बकरियाँएक दिन में अधिकतम 2.5–3.0 किग्रा. तक दूध दे देती है। 12–15 माह की अवधि में ये बकरियाँ अक्सर दो बार ब्याती है। तथा एक बार में अक्सर दो बच्चे देती हैं। मांस एवं दूध दोनों के लिये यह नस्ल उपयुक्त है।

### बीटल (Beetal)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution)** इस नस्ल का उत्पत्ति स्थान पंजाब का गुरूदासपुर जिला है। बीटल नस्ल की बकरियाँ पंजाब के गुरूदासपुर, अमृतसर, पटियाला तथा मलेट कोटला क्षेत्र के अलावा पाकिस्तान के झेलम, गुजरावाला, समालकोट के क्षेत्र में पाई जाती है। रावी नदी के क्षेत्र में इस नस्ल के उत्तम पशु पाये जाते हैं।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** जमुनापारी नस्ल की बकरी से मिलती जुलती ये बकरियाँ छोटे कद की होती है। इसका रंग सामान्यतः काला कत्थई और कभी –कभी सफेद पर कत्थई धब्बेदार होता है। बकरो में सामान्यतः दाढ़ी होती है। इस नस्ल की नाक रोमन, कान लम्बे, सींग समतल परन्तु वे बाहर और भीतर पीछे की ओर घुमावदार होते हैं। बकरों का वजन 75 किग्रा. तथा बकरियों का 50 किग्रा. तक होता है।

बीटल

**उपयोगिता (Utility) :** यह नस्ल दूध और मांस दोनों के लिए उपयुक्त है। बीटल नस्ल की बकरियाँ औसतन 1.8 किग्रा. दूध प्रतिदिन देती है। अधिकतम दूध उत्पादन 5.2 किग्रा. प्रतिदिन है।

### टोगनबर्ग (Toggenberg)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** इस नस्ल का मूल स्थान पूर्वोत्तर स्वीटजरलैण्ड की ऊँची पहाड़ियों की टोगनबर्ग घाटी है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इसके शरीर का रंग हल्का भूरा होता है जिस पर सफेद या कत्थई रंग के धब्बे होते हैं। चेहरे के दोनो तरफ कानों से थूथन तक सफेद या हल्के भूरे रंग की पट्टी होती है। पूँछ की तरफ जाँघो में अन्दर की तरफ तथा घुटनों से नीचे तक पैर सफेद होते हैं। यह नस्ल सींग रहित होती है। इसके कान छोटे सीधे होते हैं। मुँह छोटा एवं सीधा होता है। पशु छोटे आकार के होते हैं। शरीर के बाल चिकने होते हैं। शरीर के पिछले हिस्से पर लम्बे बाल होते हैं। सींग नहीं होते हैं।

टोगनवर्ग

**उपयोगिता (Utility) :** यह बकरी की एक दुधारू नस्ल है। जिसका औसत दूध उत्पादन 5–6 किग्रा. प्रतिदिन है । जिसमें 3–4 प्रतिशत वसा होती है। ये बकरियाँ लगातार 2 साल तक भी दूध देती रहती हैं।

### सिरोही (Sirohi)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** यह राजस्थान के सिरोही जिले की नस्ल है। समीपवर्ती अजमेर, उदयपुर, राजसमंद एवं भीलवाड़ा जिले में भी यह बकरी पाई जाती हैं।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इसका रंग प्रायः लाल तथा भूरे बादामी कभी–कभी काले चित्तिदार धब्बे होते हैं, सिर छोटा, कान लम्बे तथा लम्बी गर्दन, थन लम्बे, मांसल व मोटे होते हैं। इसकी पीठ में हल्का सा झोल (Depression) होता है। टांगे लम्बी व पिछली टागों पर मध्यम लम्बे बाल होते हैं।

सिरोही बकरा

**उपयोगिता (Utility) :** यह द्विप्रयोजनीय नस्ल दूध व मांस के लिए पाली जाती है। यह बकरी 1–1.5 लीटर प्रतिदिन दूध देती है।

## 13.4 भेड़ की नस्लें (Breeds of Sheep)

राजस्थान का अधिकांश भाग शुष्क और मरू क्षेत्र के अंतर्गत आता है। इसलिए राजस्थान में भेड़ पालन एक बहुत ही महत्वपूर्ण और लाभकारी व्यवसाय है क्योंकि यहाँ पर फसल उत्पादन, वर्षा की कमी तथा अनिश्चितता होने के कारण सफल व्यवसाय नही है। राजस्थान को भेड़ों का घर कहा जाता है। भेड़ पालन समाज के आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग तथा भूमिहीन मजदूरों एवं छोटे तथा सीमान्त किसानों, गृहणियों तथा पढ़े–लिखे बेरोजगारों द्वारा सफलतापूर्वक अपनाया जाता हैं। भेड़ पालन आमतौर पर भारतवर्ष की सभी प्रकार की जलवायु एवं परिस्थितियों में सफलतापूर्वक अपनाया जा सकने वाला पशु व्यवसाय है। भेड़ पालन से मुख्यतः मांस एवं ऊन आदि पशु उत्पाद प्राप्त होते हैं। देश में 42 भेड़ की नस्लें हैं जिनमें अधिकांशतः भेड़ नस्ल गलीचा किस्म की ऊन का ही उत्पादन करती है। भारतवर्ष में पाई जानी वाली चोकला नस्ल तो विश्व की सर्वोत्तम गलीचा नस्ल की भेड़ मानी जाती है। राजस्थान में भेड़ों की कुल जनसंख्या 9.08 मिलियन हैं ।

### मारवाड़ी (Marwari)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** यह भेड़ मारवाड क्षेत्र जैसे जोधपुर, पाली, नागौर, जालौर, बाड़मेर व सिरोही तथा इन जिलों के आस–पास के क्षेत्रों में पाई जाती हैं ।

**विशेषताएँ (Characteristics) :**

- शरीर मध्यम आकार का एवं चेहरा काले रंग का होता है तथा रंग गर्दन के निचले भाग तक फैला रहता है।
- कान छोटे तथा अंदर की ओर मुड़े होते हैं।
- पूँछ पतली व छोटी से मध्यम लम्बाई की होती है।
- नर व मादा भेड़ दोनों सींग रहित होते हैं।
- नर का औसतन भार 28–35 किग्रा. व औसतन लंबाई व ऊँचाई क्रमशः 66–70 तथा 56–60 सेमी तथा मादा का भार लगभग 25–30 किग्रा. होता है ।
- शरीर सुगठित, मजबूत तथा टांगे लंबी एवं मजबूत होती है जिसके कारण इस नस्ल की भेड़ें दूसरी नस्ल की भेड़ों की तुलना में अधिक दूरी तक चलने में सक्षम होती हैं।
- राजस्थान की अन्य भेड़ों की तुलना में ज्यादा स्वस्थ रहती है।
- ठण्डे एवं गर्म मौसम को सहन करने की शक्ति अधिक होती है।

मारवाड़ी

**उपयोगिता (Utility) :**

- प्रतिवर्ष 1.5 से 2.3 किग्रा. सफेद व अधिक मोटी श्रेणी की ऊन प्राप्त होती है।
- इस नस्ल के रेवड में वार्षिक जीवित दर 90 प्रतिशत से अधिक होती है।
- नर का भार 27 से 36 किग्रा. तथा मादा का भार 23 से 30 किग्रा. होता है।

### चोकला (Chokla)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** यह नस्ल मुख्य रूप से राजस्थान के शेखावटी क्षेत्र जिसमें चुरू, झुंझुनू, सीकर, नागौर, जोधपुर जिलों के रेगिस्तानी क्षेत्रों में पाई जाती हैं। इस नस्ल को छापर और शेखावटी के नाम से भी जाना जाता है ।

**विशेषताएँ (Characteristics) :**

- मुँह गहरे भूरे रंग का होता है जो कि सिर तथा नीचे आधी गर्दन तक फैला रहता है।
- शरीर मध्यम एवं वर्गाकार होता है।
- कान छोटे एवं नर व मादा भेड़ दोनों सींग रहित होते है ।
- पूँछ पतली, मध्यम लंबाई (लगभग 24 सेमी.) की होती है।

- इन भेड़ो की लंबाई एवं ऊँचाई एक समान होती है जिससे पशु वर्गाकार दिखाई देते हैं ।
- यह भेड़ सींग रहित होती है।

चोकला

**उपयोगिता (Utility) :**

- नर का औसत भार 30–40 किग्रा. व मादा का 24–32 किग्रा. होता है ।
- प्रतिवर्ष 1.5 से 2.5 किग्रा. सफेद ऊन प्राप्त होती है।

## मालपुरा (Malpura)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** इन नस्ल का नाम टोंक जिले की मालपुरा तहसील के नाम पर पड़ा है। यह मुख्य रूप से मांस उत्पादन नस्ल है। यह भेड़ें मुख्य रूप से जयपुर, टोंक, अजमेर बून्दी जिलों में एवं इनके आस पास के क्षेत्रों में पाई जाती हैं ।

**विशेषताएँ (Characteristics) :**

- शरीर की बनावट मजबूत व गठीली होती है।
- चेहरा हल्के भूरे रंग का, कान छोटे व मुड़े हुए तथा पूँछ पतली और मध्यम लंबाई की होती है।
- मुँह, पेट व टांगों पर ऊन नही होती है एवं दोनो नर एवं मादा भेड़ सींग रहित होते हैं।
- नर का भार लगभग 33–40 किग्रा. तथा औसत लंबाई व ऊँचाई क्रमशः 68.74 व 67.72 सेमी. तथा मादा का भार लगभग 24–30 किग्रा. व औसत लंबाई व चौड़ाई क्रमशः 61–65 तथा ऊंचाई 60–64 सेमी. होती हैं ।

मालपुरा

**उपयोगिता (Utility) :**

- ऊन सफेद व अधिक मोटी किस्म एवं 1.1 से 1.6 किग्रा ऊन प्राप्त होती है जो नमदा बनाने के काम आती है।
- नर भेड़ का शरीर भार 30 से 34 किग्रा. व मादा का 25 से 30 किग्रा. तक होता है

## मेरिनो (Merino)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** इस नस्ल का मूल उत्पत्ति स्थान स्पेन है वही से यह नस्ल पूरे विश्व में पहुँच गई है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** यह मजबूत प्रकृति की नस्ल है जो विपरीत कृषि–जलवायु परिस्थितियों में भी जीवन यापन कर लेती है। मेरीनो भेड़ों का रंग सफेद होता है। इसका सिर मध्यम आकार का होता है। जो ऊन से ढका रहता है । नर में घुमावदार सींग होते है। जबकि मादा भेड़ें सींग रहित होती है। इस नस्ल के पशुओं की गर्दन तथा कंधों की त्वचा में झुर्रियाँ या सलवटें होती हैं। इसमें नर का शरीर भार लगभग 90 किग्रा. तथा मादा का लगभग 70 किग्रा. होता है।

मेरिनो

**उपयोगिता (Utility) :** उत्तम किस्म तथा अधिक ऊन के उत्पादन हेतु यह भेड़ की सर्वोत्तम नस्ल है। एक भेड़ से प्रतिवर्ष 5–9 किग्रा. तक ऊन प्राप्त होती है। यह नस्ल अच्छी किस्म की ऊन प्राप्ति के लिये भारत सहित कई देशों में संकरण के लिये ले जाई गई हैं।

## कराकुल (Karakul)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** यह नस्ल मध्य एशिया में उत्पन्न मानी जाती है जो कि काफी संख्या में इरान, इराक, अफगानिस्तान, दक्षिण अफ्रीका तथा पश्चिम यूरोप के कुछ भागों में पायी जाती है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इस नस्ल के मेढ़ों (नर) में सींग होते हैं। जबकि मादा सींग रहित होती है। यह मध्यम आकार की नस्ल है।

कराकुल

**उपयोगिता (Utility) :** इसमें नर का वजन 90 किग्रा. तथा मादा का वजन 60 किग्रा. होता है। यह नस्ल मांस के लिये उपयोगी है। इस नस्ल को खासतौर से पेल्ट के लिए पाला जाता है। इसके मेमनों को कम उम्र में ही मार कर उनसे घुंघराली ऊन वाली खाल प्राप्त की जाती हैं जिससे टोपी या सर्दियों के लिये महंगे वस्त्र बनाये जाते हैं।

## अविवस्त्र (Avivastra)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution):** यह नस्ल केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान अविकानगर, मालुपरा जिला टोंक पर रेम्बूले नस्ल के मेरिनों मेढ़ों तथा राजस्थान की चौकला नस्ल की भेड़ के वर्ण संकरण से विकसित की गई है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इन भेड़ों का औसत वजन 6 माह की उम्र पर 12 किग्रा. तथा एक वर्ष की उम्र पर 23 किग्रा. देखा गया है ।

अविवस्त्र

**उपयोगिता (Utility) :** इस नस्ल की भेड़ों से 2 से 4 किग्रा. ऊन प्रति भेड़ प्राप्त होती है इनके मेमनों की वार्षिक जन्म दर 93. 21 प्रतिशत देखी गई है।

## अविकालीन (Avikalin)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** इस नस्ल की भेड़ रेम्बूले नस्ल के मेरीनों मेढ़ों (नर) तथा मालपुरा नस्ल की भेड़ों (मादा) के संकरण से तैयार की गई है। इन्हें भी केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान अविका नगर, मालपुरा जिला टोंक पर विकसित किया गया हैं।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इस नस्ल की भेड़ों की ऊन पतली होती हैं। एक वर्ष की उम्र पर इस नस्ल की भेड़ों का शारीरिक वजन 25 किग्रा होता है।

अविकालीन

**उपयोगिता (Utility) :** इन भेड़ों से 6 माह में लगभग 1.13 किग्रा. ऊन प्राप्त होती है। इन भेड़ों में टपिंग 97.95 व मेमनों के पैदा होने का प्रतिशत 81.47 होता है। इसकी ऊन से उत्तम किस्म की कालीनें बनाई जाती हैं।

### जैसलमेरी (Jaisalmeri)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution) :** यह नस्ल जैसलमेर के अलावा जोधपुर तथा बाड़मेर जिलों की पश्चिमी सीमाओं पर मुख्य रूप से पाई जाती है। जैसलमेर जिला इसका जन्म स्थान होने के कारण जैसलमेरी नाम रखा गया है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :**

- राजस्थान की अन्य सभी भेड़ नस्लों से यह अधिक बड़े आकार की होती है।
- इनकी शारीरिक बनावट सुदृढ़, हष्टपुष्ट और वर्गाकार होती है ।
- सिर बड़ा तथा नाक रोमन प्रकार की होती है ।
- चेहरा काला या गहरे भूरे रंग का होता है तथा यह रंग गर्दन व गर्दन के नीचे आधे भाग तक फैला रहता है ।
- कान लम्बे तथा खम्बदार लटके हुए होते हैं। इन भेड़ों के सींग नहीं होते तथा पूँछ मध्यम से लम्बे आकार की होती है जिसकी लम्बाई लगभग 28 सेमी. होती है ।
- नर का भार लगभग 32–45 किग्रा. तथा औसत लंबाई व ऊँचाई क्रमशः 68.55 व 66.91 सेमी. तथा मादा का भार लगभग 30–36 किग्रा. व औसत लंबाई व ऊँचाई क्रमशः 67.66 व 66.43 सेमी. होती है ।

जैसलमेरी

**उपयोगिता (Utility) :**

- ऊन सफेद व मध्यम से उत्तम श्रेणी की होती है इन भेड़ों से 1.8–3.2 किग्रा. ऊन प्राप्त होती है ।
- नर का वजन 32 से 45 किग्रा. तथा मादा का 30 से 36 किग्रा. होता है। अधिक भार होने के कारण माँस भी अधिक प्राप्त होता है।

## 13.5 ऊँट की नस्लें (Breeds of Camel)

ऊँट राजस्थान के रेगिस्तान का एक महत्वपूर्ण पशु है। इसका उपयोग कई कार्यो में होता है। इसे सवारी करने, भार ढोने, हल जोतने, रहट चलाने, ईख पेरने तथा गाड़ियों में जोतने के काम में लाया जाता है। सवारी करने, हल जोतने, रहट चलाने व गाड़ी में भार ढोने के लिए रेगिस्तानी क्षेत्रों में इसे सबसे ज्यादा उपयुक्त पाया गया है। पहाड़ी क्षेत्रों में भी इसे भार ढोने के लिये काम लेते है। एक ऊँट एक बैल जोड़ी के बराबर काम कर सकता है। ऊँट के बालों से कम्बल बनाये जाते हैं। इस पशु में अनेक विशेषताएँ है। वह शुष्क क्षेत्रों में सुगमता से रखा जा सकता है, भारी बोझढ़ो सकता है और कई दिन तक बिना पानी के भी रह सकता है। इन विशेषताओं के कारण सूखे क्षेत्रों में भारवाही पशु के रूप में यह बहुत उपयोगी है। सन् 2012 पशु गणना के अनुसार राजस्थान में ऊँटों की संख्या 0.32 मिलियन है।

ऊँट दो प्रकार के होते है – एक कूबड़ वाले ऊँट और दो कूबड़ वाले ऊँट। भारत में पाई जाने वाली ऊँटों की मुख्य प्रजातियाँ बीकानेरी, जैसलमेरी, मेवाड़ी, कच्छी और सांचोरी हैं। नर ऊँट का औसत भार लगभग 500–750 किग्रा और मादा ऊँट का औसत भार लगभग 400–600 किग्रा. होता है। जन्म के समय बच्चे का भार 35–40 किग्रा. होता है।

कार्य के आधार पर भारतीय ऊँटों को दो भागो में बांटा जा सकता है–सामान ढोने वाले और सवारी वाले ऊँट। सामान ढोने वाला ऊँट हट्टा–कटटा और सवारी वाले का शरीर हल्का होता है। राजस्थान में ऊँट की तीन मुख्य नस्लें पाई जाती हैं – (1) बीकानेरी (2) जैसलमेरी (3) मेवाड़ी।

### बीकानेरी (Bikaneri)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution):** इसका मूल स्थान राजस्थान का बीकानेर क्षेत्र है और इस नस्ल के ऊँट बीकानेर से दूसरी जगह ले जाये जाते है। बीकानेर के जोहड़बीड़ में ''राष्ट्रीय ऊष्ट्र अनुसंधान केन्द्र'' है। यह नस्ल सिंधी एवं बलुची ऊँटों के संकरण से तैयार हुई है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** ऊँट का रंग ज्यादातर गहरा भूरा यानि काले से रंग का होता है। ऊँट की ऊँचाई जमीन से थुई तक 10 से 12 फीट तक होती है। शरीर गठीला एवं मजबूत होता है। आँखे गोल व बड़ी होती है। खोपड़ी गोलाकार एवं उठी हुई होती है। जहाँ खोपड़ी आगे की ओर खत्म होती हैं वहाँ एक गड्डा होता है जिसे 'स्टॉप' कहते है जो इस नस्ल की खास पहचान है। ऊँट की आँखों, कानों एवं गले पर लम्बे–लम्बे काले बाल पाये जाते हैं। सिर मंझले दर्जे का एवं भारी होता है। आँखे चमकदार एवं बाहर निकली हुई होती हैं। आँखो के ऊपर

की तरफ गड्डा सा होता है जहाँ से नाक की हड्डी ऊपर उठी हुई दिखाई देती है इससे यह नस्ल सुंदर लगती है। वर्तमान में जो नस्ल बीकानेरी ऊँट की है वह विश्व के ऊँटों में सबसे सुंदर नस्ल है। आँखो की भौंहों व पलकों पर घने काले बाल होते हैं। कान छोटे–छोटे और ऊपर से गोलाई लिये हुए होते हैं। गर्दन मंझले आकार की नीचे से गोलाई लिये हुए होती है। थुई बड़ी एवं पीठ के बीच में होती है। छाती की गद्दी अच्छी सुदृढ़ होती है जो इसको बैठे रहने में सहायक होती है। अगले पैर लम्बे, सीधे और मजबूत हड्डियों वाले होते हैं पिछले पैर अगले पैरों की अपेक्षा कमजोर एवं अंदर की ओर मुड़े हुए होते हैं। पूँछ के दोनों तरफ व नीचे की ओर लम्बे–लम्बे काले बाल होते हैं। अण्डकोश गोल एवं बड़े होते हैं एवं पीछे से देखने पर दिखाई देते हैं। मादा ऊँटों में थन बड़े–बड़े एवं चूचक के दो–दो छेद होते हैं। दूध की वाहिनी बड़ी व उन्नत होती है।

बीकानेरी

**उपयोगिता (Utility) :** इस नस्ल के ऊँट सभी कामों के लिए उपयुक्त है। ज्यादातर इसे बोझा ढोने एवं कृषि कार्यों में काम में लिया जाता है।

### जैसलमेरी (Jaisalmeri)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution):** जैसलमेर जिले के थार के रेगिस्तान में थारपारकर केंट से उत्पन्न हुए है जो पाकिस्तान के सिन्ध प्रान्त में पाये जाते हैं।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इस नस्ल के ऊँट का रंग हल्के भूरे रंग का होता है एवं ऊँचाई 7 से 9 फीट तक होती है। ऊँट का शरीर छोटा एवं पतला होता है। आँखे चमकदार एवं सिर के अनुपात से बडी होती हैं। इस नस्ल के ऊँटों का कपाल उठा हुआ नही होता एवं स्टॉप भी नही होता जो कि बीकानेरी नस्ल में होता है। कान छोटे एवं पास–पास होते है। पैर पतले व हड्डियाँ छोटी–छोटी होती है। पैरों के तलवे भी छोटे व हल्के होते हैं जो तेज चलने में सहायक होते हैं।

जैसलमेरी

**उपयोगिता (Utility) :** इस नस्ल के ऊँट सवारी के लिए उपयुक्त है। एक प्रशिक्षित ऊँट एक ठंडी रात में 100 से 140 किमी. तक यात्रा कर सकता है। रेगिस्तान में पुलिस एवं सेना के कार्यों के लिए उपयुक्त है।

### मेवाड़ी (Mewari)

**उत्पत्ति स्थान एवं वितरण (Origin & Distribution):** उदयपुर क्षेत्र को मेवाड़ कहा जाता है जो कि अरावली की पहाड़ियों में बसा हुआ है। पुराने जमाने में सामान लाने ले जाने एवं यात्रा हेतु यहाँ पंजाब से ऊँट लाये गये थे इन ऊँटों ने अपने आपको इस क्षेत्र के अनुकूल ढाल लिया एवं धीरे–धीरे एक नस्ल का रूप ले लिया जिसे इस क्षेत्र के लोग इन ऊँटों को मेवाड़ी कहने लगे। यह नस्ल राजस्थान के पहाड़ी क्षेत्रों से लेकर गुजरात तक फैली हुई है।

**विशेषताएँ (Characteristics) :** इस नस्ल के ऊँट की लम्बाई मध्यम आकार की होती है। रंग हल्का भूरा होता है। आँखे छोटी–छोटी एवं सुस्त होती हैं। पैर छोटे एवं तलवे कठोर होते हैं। हड्डियाँ मोटी एवं मजबूत होती हैं। मुँह के नीचे का होंठ गिरा हुआ होता है। जो इस नस्ल की खास पहचान है। सिर बड़ा एवं भारी होता है। गर्दन भी छोटी एवं मोटी होती है। शरीर पर बाल घने, सख्त एवं मोटे होते हैं। मेवाड़ी ऊँट की औसत गति 3 से 5 मील प्रति घंटा है।

मेवाड़ी

**उपयोगिता (Utility) :** इस नस्ल के ऊँट कृषि कार्यों एवं भार ढोने के काम में लिये जाते हैं। इस नस्ल की मादा लगभग 4–6 लीटर दूध प्रतिदिन देती है।

## ऊँट का प्रबन्धन (Management of Camel)

स्वभाव में ऊँट एक धैर्यवान, सहनशील प्राणी माना जाता है। अन्य पालतू पशुओं की अपेक्षा इसे साधना या सिखाना कठिन है। प्रजनन काल में नर ऊँट उत्तेजित एवं उत्पाती प्रवृति का होता है। ऊँट झुण्ड़ में रहना पसन्द करता है। इसमें अपना मार्ग याद रखने की अद्‌भुत क्षमता होती हैं। कई वर्षो के अन्तराल के बाद भी ऊँट सरलता से अपने स्थान पर पहुँच जाता है। अन्य पालतू पशुओं की भाँति यह अपने पालक के साथ सामान्यतया बहुत घनिष्ठ नहीं हो पाता है।

सदियों से मरूस्थलीय प्रदेश की कठिन परिस्थितियों में रहते–रहते इसकी शारीरिक बनावट भी उसी के अनुकूल हो गई है जिनका विवरण निम्न प्रकार है –

1. विशाल शरीर के कारण तेज धूप सहन नही कर पाता किन्तु बड़े आकार के ऊँट छोटे आकार के ऊँट की अपेक्षा दिन की गर्मी में धीरे–धीरे गरम होता है। यह रेगिस्तान में पानी की खोज में दूर–दूर तक जा सकता है।
2. कूबड़ ऊँट की एक विशेषता है। यह आकार में लगभग 50 सेमी. ऊँची और 200 सेमी. घेरदार होती है।
3. इसकी त्वचा के नीचे वसा की तह नही के समान होने के कारण शरीर के अतिरिक्त ताप को निकालने में इसे सुविधा रहती है।
4. इसके पैर के पंजो की हड्डियाँ चौड़ी व चपटी होती है जो गद्‌देदार चमड़ी में धँसी होती है। ऊँट के चलने पर दबाव के कारण गद्‌देदार पंजा फैलता है और रेत में सुदृढ़ पकड़ पैदा करता है इस कारण ऊँट रेतीली भूमि पर सुगमता से चल सकता है। इसी क्षमता के कारण इसे ''रेगिस्तान का जहाज'' (Ship of Desert) कहते है।
5. ऊँट के वक्षस्थल एवं चारों पैरों के घुटनों पर मोटी कठोर त्वचा की गद्‌दी होती है। ऊँट जब बैठता है तब केवल यही भाग भूमि के सम्पर्क में आता है। शरीर के अन्य भाग ऊँचाई पर रहते हैं।
6. ऊँट की गर्दन व सिर का कठिन परिस्थितियों में जीवित रह पाने में एक महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसके होंठ अत्यधिक संवेदनशील होते हैं जिससे कंटीली झाडियों एवं वृक्षों से पत्तियाँ चरते हुए कांटें चुभने से बचाव होता है। इसकी उभरी भौंहे सूर्य प्रकाश के चकाचौंध से आँखो को बचाती हैं।

आहार व्यवस्था – ऊँट प्रतिदिन अपने शरीर के भार का 1.5–2.0 प्रतिशत चारा शुष्क पदार्थ के रूप में ग्रहण कर सकता हैं ऊँटों को निम्न तालिका के अनुसार खिलाना चाहिए :–

| आयुवर्ग | चारा (किलोग्राम प्रतिदिन) | दाना मिश्रण (किलोग्राम प्रतिदिन) |
|---|---|---|
| 6 माह तक | 2.5 | 0.5 |
| 6–12 माह तक | 2.5 | 0.5 |
| 1–2 वर्ष | 5.0 | 1.0 |
| 2–3 वर्ष | 8.0 | 1.5 |
| 3 वर्ष के उपरान्त | 12.0 | 2.5 |
| नर (प्रजनन हेतु) | 14.0 | 3.0 |

### तालिका

इसके अतिरिक्त नमक 30–80 ग्राम प्रतिदिन प्रति पशु देना आवश्यक है। गर्भकाल के अन्तिम चरणों में, दूध देने वाले पशुओं में व बोझा ढोने का काम करने वाले ऊँटों को लगभग 25 प्रतिशत अतिरिक्त पोषक तत्व आहार के रूप में उपलब्ध कराना चाहिये ।

सन्तुलित आहार बनाने के लिये मिश्रण तैयार कर सकते है –

1. भूसा और फलीदार चारा 1:1 ।
2. भूसा और मोठ या ग्वार फलगट्‌टी 65:35 ।

ऊँट प्रायः शुष्क चारा ही पसन्द करता है, किन्तु यदि लगभग 25 प्रतिशत हरा चारा उपलब्ध कराया जाये तो अच्छा रहता है।

1. **वर्षा ऋतु –** वानस्पतिक उत्पादन में वर्षा ऋतु का बहुत महत्व है । मानसून के प्रारम्भ होते ही जुलाई में भ्रूट, अंजन, सेवन, बेकरिया, गोखरू, गंठील, लांपला इत्यादि अनेक प्रकार की घास पनपने लगती हैं परन्तु यह जुलाई के प्रारम्भ में अत्यन्त छोटे होने के कारण चराई योग्य नहीं होती हैं। अगस्त, सितम्बर एवं अक्टूबर माह में पर्याप्त चरागाह उपलब्ध हो जाता है। इन घासों के अतिरिक्त खेतों में मोठ, ग्वार, बाजरा आदि उपलब्ध होने लगता हैं। इन्ही दिनों बोरड़ी का पाला, खेजड़ी, लुंग व फोग चारा

भी काटकर एकत्र किया जाता हैं जिसे आवश्यकता पड़ने पर खिलाया जाता है। वर्षा ऋतु में चने का भूसा विशेष रूप से बाजार में उपलब्ध होता है।

2. **शीत ऋतु** – नवम्बर में शीत ऋतु प्रारम्भ होते ही चर भूमियों की प्राकृतिक घास सूख जाती है तथा पेड़ों की पत्तियाँ झड़ने लगती हैं। पाला, मोठ चारा व ग्वार फलगट्टी आदि मुख्य सूखा चारा उपलब्ध होता है तथा हरे चारे में सिंचित खेती से सरसों, रिजका, जई, मेंथी बरसीम आदि उपलब्ध होते हैं।

3. **ग्रीष्म ऋतु** – गर्मी का प्रारम्भ मार्च – अप्रेल की बसन्ती बहार से होता है जब ऊँटों को पुष्प रंजित फोग, बावली, केर इत्यादि वनस्पतियाँ इस शुष्क काल में भी उपलब्ध हो जाती हैं। मई माह में खेजड़ी, जाल, नीम आदि चारे के प्रमुख स्त्रौत रह जाते हैं। खेजडी, लुंग एक सर्वप्रिय पात चारा है। सिंचित दशा में उगाये गये एम.पी. चरी, बाजरा, चंवला आदि सभी चारे उपलब्ध कराये जा सकते हैं।

## ऊँट की प्रजनन व्यवस्था

1. मादा ऊँट (सांडिनी) 3–4 वर्ष की आयु पर गर्भ धारण करने में सक्षम होती है तथा ऊँट 5–6 वर्ष की आयु पर प्रजनन के उपयोग में लिया जा सकता है।
2. नर ऊँटों की भाँति सांडिनी सर्दियों में ही गरम होती है तथा गर्भ धारण करने की क्षमता रखती है।
3. मादा में डिम्ब का स्खलन नर से मिलाने के लगभग 36 घण्टे बाद होता है।
4. साधारणतया 2 वर्ष के अन्तराल से एक सांडिनी से एक बच्चा प्राप्त होता है किन्तु यदि सांडिनी को सर्दी प्रारम्भ होते ही गर्भित कर अगले वर्ष दिसम्बर में बच्चा लेकर दो माह पश्चात पुनः गर्भित कराया जाये तो 3 वर्षो में 2 बच्चे प्राप्त किये जा सकते हैं।
5. सांडिनी में गर्भकाल 385 से 390 दिन के बीच पाया जाता है।
6. प्रसव के समय देखा गया है कि सांडिनी में दूध उतर जाता है, प्रजनन अंग शिथिल पड़ जाते हैं तथा प्रजनन अंगों से श्वेत द्रव निकलने लगता हैं। पशु बार–बार बैठता व खड़ा होता है। बच्चे को मां का पहला दूध (खींस) एक घण्टे के भीतर पिलाना आवश्यक है।
7. सांड की जेर का ध्यान रखना चाहिए कि वह 12 घण्टे के अन्दर निकल जाये, नहीं निकलने की स्थिति में पशु चिकित्सक को दिखावें।
8. बच्चे की नाभि में जीवाणु रोधक औषधि लगवानी चाहिये। हो सके तो विटामिन ''ए'' का टीका लगवा देना चाहिये । तीन दिन तक ''क्लोरमकोनिकल'' या कोई प्रतिजीवि औषधि दिलाने से बच्चों में मृत्यु दर को कम किया जा सकता है।

## ऊँटों की आवास व्यवस्था

1. ऊँटों का आवास खुली जगह में होना चाहिये। धूप और बारिश से बचाने के लिये थोड़ी छाया का भी प्रबन्ध करना चाहिये ।
2. ऊँट के आवास स्थल ऊँचाई पर होने चाहिये जहां पर वर्षा का पानी न रूक सके ।
3. आवास की दीवारें मिट्टी या कच्ची ईंटों की बनाई जा सकती है।
4. खुला हुआ भाग ऐसा न हो जहाँ सीधी हवा आती हो ।
5. फर्श कच्चा भी रखा जा सकता है लेकिन ऐसा बनाना चाहिए जहाँ गन्दगी जमा न हो सके।
6. बाड़े में एक नांद भी बनानी चाहिये। यह पक्की ईंटों की तथा जमीन से 3 फुट की ऊँचाई पर होनी चाहिए। गर्मियों में ऊँट को खुले में रखना चाहिए।
7. एक ऊँट को 70–100 वर्ग फुट स्थान की आवश्यकता होती है।

ऊँटों की सामान्य बीमारियाँ– ऊँट में होने वाली बीमारियां, दस्त लगना, आफरा, पैरों की खुजली, परजीवी प्रकोप, सर्रा अथवा तिबसा (ट्रिपेनोसोनियसिल), एन्थ्रेक्स, गलघोटू, निमोनिया, माता आदि रोग आते हैं।

## महत्वपूर्ण बिन्दु (Important Points)

1. तीवर्षा रोग ट्रिपेनोसोमा इवैन्साई नामक परजीवी कीटाणु द्वारा होता है।
2. राष्ट्रीय पशु अनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल (हरियाणा) के अनुसार भारतीय गाय की 40 तथा भैंस की 13 मान्य नस्लें है।
3. भैंसो में सबसे अधिक वसा प्रतिशत (12–14 प्रतिशत) भदावरी नस्ल की भैंस के दूध में पाया जाता है।
4. विश्व में बकरियों की लगभग 60 नस्ले हैं। जिनमें से लगभग 26 नस्लें भारत में पाई जाती हैं।
5. पिछली टांगों पर पीछे की तरफ लम्बे घने बालो का होना जमुनापारी नस्ल की खास पहचान है।
6. बरबरी नस्ल की बकरी 12–15 माह की अवधि में दो बार ब्यांती है तथा एक बार में अक्सर दो बच्चे देती है।
7. टोगनबर्ग दुधारू नस्ल की बकरी है।
8. टोगनबर्ग नस्ल की बकरी के सींग नहीं होते हैं।
9. भारत में भेड़ों की लगभग 42 नस्लें है ।
10. मारवाड़ी नस्ल की भेड़ें मुख्यतः मारवाड़ क्षेत्र के पाली, जोधपुर, नागौर, सिरोही जिलों में पायी जाती हैं।

11. भेड़ की चौकला नस्ल को ''राजस्थान की मेरिनो'' कहा जाता है।
12. अविवस्त्र नस्ल की भेड़, को रेम्बूले नस्ल के मेरिनों मेढ़ों तथा राजस्थान की चौकला नस्ल की भेड़ के संकरण से विकसित किया गया है तथा अविकालीन नस्ल की भेड़ें रेम्बूले नस्ल के मेरीनों मेढ़ों (नर) तथा मालपुरा नस्ल की भेड़ों (मादा) के संकरण से विकसित की गई हैं।
13. मेरिनों नस्ल की भेड़ों की गर्दन तथा कंधों की त्वचा पर झुर्रियाँ होती हैं।
14. भारत में सर्वाधिक ऊँटों की संख्या राजस्थान में है।
15. बीकानेरी ऊँट की जमीन से थुई तक ऊँचाई 10 से 12 फीट होती है।
16. जैसलमेरी नस्ल के ऊँट का उद्‌गम स्थान राजस्थान का जैसलमेर क्षेत्र है।
17. ऊँट के कूबड़ का आकार उसको मिल रहे आहार की मात्रा दर्शाता है ।
18. ऊँट को प्रतिदिन औसतन 75–150 ग्राम साधारण नमक दिया जाता है।
19. ऊँट को रोजाना 18–36 लीटर पानी की आवश्यकता होती है।
20. सर्रा रोग तीन वर्ष तक चलता रहता है इसलिये इसे तीवर्षा रोग कहते हैं।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

### बहुचयनात्मक प्रश्न –

1. गाय की दुधारू नस्ल है –
   (अ) नागौरी (ब)खिल्लारी
   (स)गिर (द) हरियाणा
2. मिनिएचर गाय कहलाती है
   (अ) बच्चौर (ब)खिल्लारी
   (स)कंगायम (द)बेचूर
3. राजस्थान में पायी जाने वाली सबसे अच्छी भारवाही नस्ल है
   (अ) नागौरी (ब)राठी
   (स)हरियाणा (द) थारपारकर
4. सबसे अधिक वसा प्रतिशत वाले दूध के लिये भैंस की नस्ल जानी जाती है।
   (अ) मुर्रा (ब) भदावरी
   (स) जाफराबादी (द) सूरती
5. बकरी की टोगनवर्ग नस्ल को पालते है।
   (अ) दूध के लिये (ब) मांस के लिये
   (स) पश्मीना के लिये (द) मोहेर के लिये
6. जमुनापारी नस्ल की बकरी का मूल उत्पत्ति स्थान है –
   (अ) एटा जिला (ब) इटावा जिला
   (स) आगरा जिला (द) मैनपुरी जिला
7. राजस्थान की मेरिनों, भेड़ की किस नस्ल को कहते है?
   (अ) चौकला (ब) मारवाड़ी
   (स) अविवस्त्र (द) मालपुरा
8. भारत में भेड़ों की लगभग कितनी नस्लें हैं ?
   (अ) लगभग 100 (ब) लगभग 150
   (स) लगभग 42 (द) लगभग 80
9. बीकानेरी नस्ल के ऊँट की जमीन से थुई तक ऊँचाई होती है ?
   (अ) 12 से 14 फीट (ब)10 से 12 फीट
   (स) 7 से 9 फीट (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं
10. ऊँट की बीकानेरी नस्ल का उद्‌गम स्थान है ?
    (अ)बीकानेर क्षेत्र (ब)जैसलमेर क्षेत्र
    (स)उदयपुर क्षेत्र (द)गुजरात का कच्छ क्षेत्र

### अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

11. गिर गाय का मूल उत्पत्ति स्थान बताइये।
12. सबसे अधिक दूध देने वाली गाय की विदेशी नस्ल का नाम बताइये।
13. भैंस की नीली नस्ल का नाम नीली क्यों रखा गया है।
14. बीटल नस्ल की बकरी का उत्पत्ति स्थान लिखिए।
15. किस नस्ल के बकरो (नर) में दाढ़ी पाई जाती है ?
16. पेल्ट के लिये भेड़ की उपयुक्त नस्ल का नाम लिखिए।
17. उत्तरी हिमालय क्षेत्र में पाई जाने वाली भेड़ की किन्हीं दो नस्लों के नाम लिखिए।
18. पशुगणना 2012 के अनुसार राजस्थान में ऊँटों की संख्या कितनी है ?

### लघूत्तरात्मक प्रश्न –

19. जाफराबादी भैंस की शारीरिक विशेषतायें लिखिये ।
20. नस्ल किसे कहते है ?परिभाषित कीजिए ।
21. टोगनबर्ग नस्ल की बकरी की विशेषताएँ लिखिए ।
22. बीटल नस्ल की बकरी की क्या उपयोगिता है ?
23. केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान अविका नगर, टोंक पर संकरण द्वारा विकसित दो नस्लों के बारे में बताइये।
24. जैसलमेरी नस्ल की भेड़ का उत्पत्ति स्थान एवं वितरण लिखिए ।

25. कराकुल नस्ल की भेड़ का उत्पत्ति स्थान एवं शारीरिक विशेषतायें लिखिए ।
26. अविकालीन नस्ल की भेड़ का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
27. ऊँट की बीकानेरी नस्ल का वर्णन कीजिए।

## निबन्धात्मक प्रश्न –

28. गाय की निम्न नस्लों का उत्पत्ति स्थान, लक्षण एवं उपयोगिता तालिका बनाकर लिखिये ।
    (अ) थारपारकर (ब) जर्सी
    (स)मालवी (द) हरियाणा
29. भैंस की मुर्रा एवं मेहसाना नस्लों का वर्णन कीजिए ।
30. बरबरी नस्ल का मूल स्थान, वितरण, विशेषतायें तथा उपयोगितायें लिखिए ।
31. मेरिनो नस्ल की भेड़ का उत्पत्ति स्थान, वितरण, विशेषतायें एवं उपयोगितायें लिखिए ।
32. भेड़ की मारवाड़ी नस्ल का उत्पत्ति स्थान वितरण, शारीरिक विशेषतायें एवं उपयोगितायें बताइए ।
33. ऊँट की निम्न नस्लों का उत्पत्ति स्थान, लक्षण एवं उपयोगिता तालिका बनाकर लिखिये ।
    अ. बीकानेरी ब. मेवाड़ी
    स. जैसलमेरी

## उत्तरमाला

स 2. द 3. अ 4. ब 5. अ 6. ब 7. अ 8. स 9. ब 10. अ

# अध्याय–14
# पशु रोग (Animal Disease)

पशुओं में किसी भी बीमारी का होना या न होना इस बात पर निर्भर करता है कि वह पशु किस वातावरण में किस प्रकार के खान–पान तथा किस–किस के सम्पर्क में रहकर अपनी दिनचर्या पूर्ण करता है। पशुओं में जो बीमारियाँ होती हैं वह निम्न कारणों से होती हैं:–

1. जीवाणु जनित रोग– पशुओं में जितने भी विशिष्ट एवं घातक रोग होते हैं। ये सब जीवाणुओं की ही देन है। जीवाणु द्वारा पशुओं में पैदा होने वाले रोग जैसे गलघोंटू, विष ज्वर, लंगड़ा बुखार, क्षय रोग, संक्रामक गर्भपात, थनैला रोग, बच्चे के सफेद दस्त, टिटनस, एन्ट्रोटाक्सीमिया फिडकिया आदि हैं।
2. विषाणु जनित रोग– विषाणु जनित रोग जीवाणु से अधिक घातक होते है जैसे खुरपका–मुँहपका, अढ़ैया या ढाई दिन का बुखार, चेचक एवं पागलपन।
3. परजीवी रोग– परजीवी कीट पशुओं के शरीर में निवास करते है। इनमे से कुछ शरीर के ऊपर तथा कुछ शरीर के भीतर पाये जाते है।
   - **(अ) बाह्य परजीवी–** ऐसे कीट जो पशुओं की त्वचा पर रहते है जैसे जूँ कलीली, पिस्सू आदि इनसे निम्न बीमारियाँ होती है– खाज एवं खुजली आदि।
   - **(ब) अन्तः परजीवी–** इनसे निम्न बीमारियाँ होती है– थेलेसिओसिस, सर्रा, लाल पेशाब, फेसियोलाईसिस एवं अन्य पेट के कीड़े आदि।
4. खराब रख–रखाव, अनुचित देखभाल, गलत खान–पान एवं पोषक तत्व न्यूनता से होने वाली बीमारियाँ जैसे कब्ज, दस्त खांसी, अपच, न्यूमोनिया, रतौंधी आदि।
5. चयापचय जन्य रोग– शरीर में सामान्य चयापचय प्रक्रियाओं के विचलित होने से ये रोग उत्पन्न होते है जैसे मिल्क फीवर, कीटोसिस।
6. जन्मजात रोग– कुछ रोग पशु के पैदा होने के साथ ही होते है जैसे फ्री मार्टिन।

## स्वस्थ पशु के सामान्य लक्षण (General Characters of Healthy Animal)

1. पशु की शारीरिक, मानसिक व कायिकीय क्रियाएँ, सामान्य रुप से चलना।
2. देखने पर चौकन्ने, कान खड़े हुये, चमड़ी चमकदार तथा बाल चमड़ी से लगे हुए रहते हैं।
3. शरीर का तापमान, श्वसन गति व नाड़ी गति सामान्य।
4. पशु का गोबर सामान्यतया ढीला, कठोर तथा रंग सामान्य।
5. खाना–पीना एवं जुगाली सामान्य रुप से करना।
6. आँखें सामान्य, चमकीली एवं चौकन्नी।
7. दुग्ध उत्पादन सामान्य तथा बछड़े को सामान्य रुप से दूध पिलाना आदि।

## बीमार पशु के लक्षण (Characters of Unhealthy Animal)

1. पशु की शारीरिक, मानसिक व कायिकीय क्रियाएँ, सामान्य रुप से गड़बड़ा जाना।
2. खाना–पीना एवं जुगाली अनियमित या बंद कर देना।
3. आँख, मुँह व नाक से पानी या लार गिरना।
4. पशु सुस्त, कान लटके हुए तथा बाल खड़े हुए।
5. शरीर का तापमान, श्वसन गति कम या अधिक होना।
6. गोबर पतला या सख्त कठोर व बदबूदार करना।
7. दुग्ध की मात्रा में अचानक कमी होना।

## पशु माता (पशु प्लेग) (Rinder Pest)

यह एक वायरस द्वारा फैलने वाला बहुत ही भयानक संक्रामक रोग है इसके प्रकोप से लाखों पशु प्रतिवर्ष मौत के घाट उतर जाते हैं यह रोग सभी जुगाली करने वाले पशुओं में होता है लेकिन गाय, भैसों में यह रोग ज्यादा घातक होता है। एक बार इस रोग ग्रसित होने पर वही पशु कई वर्षो बाद भी इस रोग से पीड़ित हो सकता है। वैसे तो यह महामारी किसी भी मौसम मे हो सकती है। लेकिन सूखे मौसम में अधिक होती है।

### संक्रमण फैलने का तरीका

1. दूषित चारे, दाने, पानी के सम्पर्क से यह रोग फैलता है।
2. रोगी पशु के सभी स्रावों जैसे गोबर आदि में ये वायरस बहुत अधिक मात्रा में होते हैं जो खाद्य पदार्थो को संक्रमित कर रोग फैलाते हैं।

### रोग कारक

यह बीमारी छनित वायरस द्वारा होती है। यह छनित वायरस एक पशु से दूसरे पशु में पहुँचकर रोग फैलाता है। शरीर के अन्दर यह वायरस काफी समय तक जीवित रह सकता है लेकिन शरीर के बाहर यह 24 घण्टे से अधिक जीवित नहीं रहता है। रोगी के शरीर से निकलने वाले सभी स्रावों में यह वायरस उपस्थित रहता है।

### प्रभावित अंग

इस रोग में रोगी पशु की सम्पूर्ण आहारनाल प्रभावित होती है आहारनाल में छाले हो जाते हैं।

रोग के लक्षण

1. पशु शरीर का तापमान 104-107° फा. तक हो जाता है।
2. पशु की आंखें लाल हो जाती है तथा आँखों से पानी बहने लगता है।
3. पहले पशु का गोबर सख्त कठोर व खून भी साथ आता है लेकिन बाद में पानी जैसा पतला खून मिला हुआ दस्त करता है, इस कारण इस रोग को पौकनी रोग कहते है और अन्त में पशु पिचकारी की तरह तेजी से गोबर करता है जो काफी दूर गिरता है।
4. मुँह के अन्दर छाले हो जाते है तथा मुँह, आँख, एवं नाक से पानी बहने लगता है।
5. अन्त में ये स्राव गाढ़े होकर मवाद जैसी स्थिति में आ जाता है।
6. रोगग्रस्त में पशु 4–7 दिन में मर जाता है।

### उपचार

1. सल्फामिडिन का 50 मिली का अन्तशिरा इन्जेक्शन (Inj. Sulphdimidine –50 ml) दें।
2. दस्त रोकने के लिये –सल्फामिडिन का 15 मिली का अन्तपेशी इन्जेक्शन (Inj. Sulphdimidine 15 ml) तुरन्त दें।
3. दस्त में रक्त रोकने के लिये। इन्जेक्शन क्रोम–10 मिली. –अन्तपेशी दें।
4. इन्जेक्शन एनालजीन–15 मिली.–अन्तपेशी दें।
5. इन्जेक्शन एवील–10 मिली.–अन्तपेशी दें।

### रोग से बचाव

1. पशुओं में नियमित रिन्डर पेस्ट (R.P.) का टीका लगवाये।
   मात्रा–1 मिली. अन्तत्वचीय।
   समय–3 वर्ष में एक बार (जून माह) लगावें।
2. बीमार व स्वच्छ पशु को अलग अलग रखें।
3. मृत पशु को गाढ़ दें व इनके स्त्रावों को जला दें।
4. साफ सफाई का ध्यान रखें।

## खुरपका–मुँहपका रोग (Foot & Mouth Disease)

इस रोग में सबसे पहले पैरों में छाले होने शुरु हो जाते हैं। जब पशु चरने जाता है तब यह छाले फटना शुरु कर देते हैं इससे बहुत से वायरस पैदा हो जाते हैं। जब इन घाव को पशु जीभ से चाटता है तब मुँह मे भी छाले हो जाते हैं। इसलिये इस रोग को खुरपका–मुँहपका रोग कहते है। यह पहले पैरों में व बाद में मुँह में होता है। यह बहुत शीघ्रता से फैलने वाला वायरस जनित रोग है सभी जुगाली करने वाले (दो खुर वाले) पशुओं में होता है। प्रायः यह रोग गाय, भैंस, भेड़ व बकरी में पाया जाता है। इस रोग में पशु की मृत्युदर तो कम होती है लेकिन पशुपालकों को काफी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

### संक्रमण फैलने का माध्यम

1. दूषित चारे व पानी के सेवन से।
2. रोगी पशुओं के स्रावों के सम्पर्क में आने से।
3. हवा के माध्यम से।
4. दूषित मिट्टी के सम्पर्क आदि से।

### रोग कारक

यह रोग वायरस की 7 प्रजातियों द्वारा फैलाया जाता है। जो निम्न है –

ए, ओ, सी, सेट I, सेट II, सेट III, एशिया सेट I इत्यादि।

### प्रभावित अंग

इस रोग में मुख्यतः मुँह व होठों के बीच की झिल्ली में छाले हो जाते हैं। खुरों के बीच की झिल्ली में छालें होकर फूटने से घाव बन जाते हैं जिन पर मक्खियों का संक्रमण हो जाने पर कीड़े पड़ जाते हैं। इस अवस्था में रोग ज्यादा घातक सिद्ध होता है।

### रोग के लक्षण

1. रोगी पशु को 105 – 106° फा. तक तेज बुखार।
2. मुँह में छालें होने से लगातार लार गिरना जिसमें चिपचिपाहट की ध्वनि उत्पन्न होती है।
3. खुरों के बीच छालें होने से पशु का लंगड़ाकर चलना।
4. दूधारु पशु के दुग्ध उत्पादन में अचानक कमी होना।
5. पशु जुगाली करना बंद कर देता है।

### उपचार

1. मुँह के छालों का पोटाश अथवा फिटकरी के घोल से धोकर उस पर 1 भाग सुहागा और बोरिक एसिड को ग्लिसरीन, शहद या शीरे में मिलाकर दिन में 2–3 बार लेप करें।

2. पैरों के छालों को कॉपर सल्फेट या लाल दवा के 1% घोल से सुबह शाम धोवें।
3. यदि घाव में कीड़ें पड़ गये हो तो घाव पर तारपीन के तेल का मोम बनाकर रखें।
4. इन्जेक्शन एनालजीन –15 मिली. अन्तः पेशी देवें। दर्द के लिये (बड़े पशुओं में)–3 दिन तक।
5. घावों से द्वितीयक संक्रमण रोकने व घावों को सुखाने के लिये इन्जक्शन एम्पीसिलीन–3 ग्राम का अन्तः पेशी लगाना चाहिए।
6. नजदीकी पशुचिकित्सालय मे तुरन्त सम्पर्क करना चाहिए।

### रोग से बचाव

1. एफ.एम.डी.टीका (F.M.D. Vaccine) 1–2 मिली. अन्तःपेशी (I/M) वर्ष में दो बार (जून एवं दिसम्बर) लगाना चाहिए।
2. बीमार पशु को स्वस्थ पशु से अलग रखें।
3. रोगी मृत पशु को जमीन में गाढ़ दें या जला दें।
4. रोगी पशु के बिछावन को जला दें।
5. पशु के रहने की जगह को साफ सुथरा रखें।

## जहरबाद (Black Quarter)

इस रोग को लंगड़ा बुखार, फड़ सूजन व चुर्चरिया नाम से भी जाना जाता है। यह एक तीव्र संक्रामक रोग है जो गाय भैंस में मुख्य रुप से तथा कभी–कभी भेड़ बकरी में पाया जाता है छोटी उम्र 4 माह से 3 वर्ष तक के पशु इस रोग से अधिक प्रभावित होते हैं। यह रोग प्रायः वर्षा ऋतु के बाद ज्यादा फैलता है। इस रोग में शरीर के मांसल भाग विशेष रुप से कंधे व पुठ्ठों पर गैस भरी सूजन आ जाने से पशु लंगड़ाने लगता है।

बीमारी फैलने का माध्यम

1. संक्रमित चारे पानी के उपयोग से इस रोग के बीजाणु (Spore) आहार नाल में चले जाने से।
2. संक्रमित मिट्टी व चारागाह के उपयोग से।
3. घाव के माध्यम से–शरीर पर होने वाले घावों के माध्यम से ये जीवाणु (Spore) शरीर में प्रवेश करते है तथा मांस पेशियों में पहुँचकर अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं तथा विष पैदा करते हैं। इस विष (Toxin) के प्रभाव से मांस पेशियों के रेशे व रक्त कोशिकाएँ गल जाती है। तथा इनके सड़ने से गैस पैदा होती है जो त्वचा के नीचे जमा होकर सूजन पैदा करती है।

### रोग कारक

यह रोग क्लोस्ट्रीडियम शोवियाई द्वारा अधिक फैलता है जो संक्रमित मांस पेशियों में पाया जाता है। शरीर से बाहर ये जीवाणु अपने चारों ओर कवच बनाकर मिट्टी व चारागाहों में काफी समय तक जीवित रहते हैं।

प्रभावित अंग

इस रोग में शरीर के मांसल भाग प्रभावित होते हैं जैसे गर्दन, कन्धे व पुठ्ठे की मांस पेशियाँ।

### रोग के लक्षण

1. तेज बुखार जो 104 – 106° फा. तक।
2. कन्धे, पुठ्ठे या गर्दन की मांस पेशियों मे सूजन आ जाती है जो पहले गर्म व दर्द वाली होती है बाद में यह सूजन ठण्डी व पीड़ा रहित हो जाती है।
3. अगर इस सूजन वाली जगह को ऊपर दबावें तो चरचर की आवाज आती है। जो इस बीमारी की मुख्य पहचान है। अगर इस स्थान पर चीरा लगाया जाये तो काले रंग का झागदार व बदबूदार खून बाहर निकलता है।
4. पशु लंगड़ाकर चलता है।
5. पशु खाना पीना कम या बंद कर देता है।
6. शरीर के विभिन्न भागों में जकड़न शुरु हो जाती है।

### उपचार (Treatment)

1. इन्जेक्शन प्रोकेन पेनिसिलिन फोर्ट (P.P.F.) का 80 लाख 10 ml., foy (Avil) में घोलकर सूजन वाली जगह पर तीन दिन प्रतिदिन लगावें।
2. सूजन कम करने के लिये
   – इन्जे0 प्रेडनीसोलोन – 15 मिली. – अन्तः पेशी
   –इन्जे0 डेक्सोना – 10 मिली. – अन्तः पेशी
3. दर्द के लिये –इन्जे0 नीमोवेट – 15 मिली. – अन्तः पेशी

### रोग से बचाव

1. प्रतिवर्ष बरसात (जून माह) में बी. क्यू. 5 मिली. का टीका लगवायें।
2. मृत पशु को गाढ़ दें या जला दें।
3. स्वस्थ व बीमार पशुओं को अलग अलग रखें।
4. बीमार पशु के स्राव आदि को जला दें।
5. पशुशाला की समय–समय पर लाल दवा या फिनायल से सफाई करें।

## एन्थ्रेक्स (Anthrax)

इस रोग को जहरी बुखार/तिल्ली रोग से भी पहचाना जाता है। यह एकाएक व तेजी से फैलने वाला रोग है जो एक लम्बे क्षेत्र में फैलता है। यह रोग गाय, भैंस, भेड़, बकरी में फैलता है।

### संक्रमण फैलने का तरीका

1. संक्रमित चारे, पानी व मिट्टी के सम्पर्क में आने से।
2. खून चूसने वाली मक्खी या मच्छर से जो संक्रमित खून को एक पशु से दूसरे पशु में पहुँचाते हैं।
3. शरीर में होने वाले घाव/चोट द्वारा।
4. संक्रमित मनुष्यों द्वारा पशुओं में।

### रोग कारक

यह रोग बेसीलस एन्थ्रेसिस नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। यह जीवाणु बीमार पशु के रक्त एवं ऊतकों (बाल, खाल, ऊन, शरीर से निकलने वाले सभी स्रावों) में पाया जाता हैं। यह एक जेनेटिक बीमारी है जो पशुओं से मनुष्य में व मनुष्य से पशुओं मे फैलती है। पशु की मृत्यु के बाद भी ये जीवाणु हवा व मिट्टी में सुरक्षा कवच बनाकर कई वर्षों तक जीवित रह सकते हैं तथा अनुकूल मौसम मिलने पर रोग फैलाते हैं इसलिये इसे मिट्टी जनित रोग भी कहते हैं।

प्रभावित अंग

इस रोग में रक्त प्लीहा एवं शरीर के समस्त बाहरी ऊतक प्रभावित होते है।

### रोग के लक्षण

1. मुँह, नाक व गुदा से झागदार काला खून निकलता है।
2. शरीर का तापमान 105 – 107 °F तक।
3. बीमार भेड़ों के पैर फूले हुये, सांस लेने में तकलीफ, जमीन पर आड़ी पड़ी हुई दाँत किटकिटाती है।
4. कभी–कभी जीभ, गला व अगले पैरों में सूजन आ जाती है।
5. अन्त में खूनी दस्त का होना।
6. गर्भित पशुओं में गर्भपात का होना आदि।

### उपचार

1. सल्फाडिमिडिन का इन्जेक्शन 10 मिली. अन्त शिरा पशुचिकित्सक से लगवाएँ।
2. इन्जेक्शन डेक्सोना 3 मिली. अन्तः पेशी लगवाएँ।
3. बुखार व दर्द के लिये इन्जेक्शन टाइसिन का 15 मिली. अन्तः पेशी लगवाएँ।

### रोग से बचाव

1. प्रतिवर्ष जून माह में एन्थ्रेक्स स्पोर वेक्सीन 1 मिली. अन्तः त्वचीय लगवाएँ।
2. मृत पशु को बिना खाल उतारे जमीन में 5 फीट गहराई में गाढ़ दें।
3. सभी स्त्रावों व आस–पास की मिट्टी को जला दें।
4. मृत पशु के रहने की जगह की सफाई फिनायल से करे।
5. रोगी पशु को स्वस्थ पशुओं से तुरन्त अलग करें।

## गलघोंटू (Haemorrhagic septicemia)

यह गाय, भैसों व भेड़ों में होने वाला भयंकर जीवाणु जनित रोग है। एक बार लक्षण प्रकट होने पर मृत्युदर 80–90 प्रतिशत तक रहती है। यह रोग प्रायः बरसात के मौसम में अधिक होता है तथा कम उम्र के 6 माह से 2 वर्ष तक के पशु अधिक प्रभावित होते हैं। लम्बी दूरी की यात्रा के बाद भी गलघोंटू रोग होने की संभावना रहती है। इसी कारण इसे शिपिंग फीवर भी कहते हैं।

### संक्रमण फैलने का तरीका

1. यह रोग, रोगजनक जीवाणुओं के पाचननाल, श्वासनाल तथा त्वचा के माध्यम से शरीर में प्रवेश करने पर फैलता है। रोगी के लार में भारी संख्या में जीवाणु उपस्थित रहते है जो विभिन्न माध्यमों से संक्रमण फैलाने का कार्य करते हैं।
2. खून चूसने वाली मक्खी एवं मच्छरों से, जो संक्रमित पशु का खून चूसकर स्वस्थ पशु का खून चूसते हैं।
3. रोगी पशु के दूषित चारे, पानी, स्त्राव आदि के सम्पर्क में आने से।

ये जीवाणु शरीर में प्रवेश कर जहर (Toxin) पैदा करते हैं जिसके कारण सारे शरीर में टोरमिया (Toremia) हो जाता है जो मृत्यु का मुख्य कारण है।

### रोग कारक

इस रोग को निम्न जीवाणु फैलाते हैः–

1. पाश्च्यूरेला बोवीसेप्टिका (Pasturella boviseptica)– गायों में ।
2. पाश्च्यूरेला बुबैली सेप्टिका *(Pasturella buballiseptica)*– भेसों में ।
3 पाश्च्यूरेला ऑविस *(Pasturella ovis)*– भेड़ बकरी में ।

### प्रभावित अंग

विष बनने के कारण पूरा शरीर ही प्रभावित होता है परन्तु मुख्य रुप से श्वसन नाल प्रभावित होती है। गले में सूजन आ जाती है। जिससे पशु को सांस लेने में तकलीफ होती है और घर्र–घर्र की आवाज आती है।

### रोग के लक्षण

1. 105 – 107° F तक तेज बुखार, शरीर में कपकपाहट होने से पशु एक दिन में ही मर जाता है।
2. गले के नीचे व अगले पैरो के बीच में गर्म व कठोर सूजन का आ जाना।
3. सांस लेने में तकलीफ होने से घर्र–घर्र की आवाज आना, मुँह व नाक से स्राव निकलना।
4. आँखें लाल व सूजी हुई होना।

5. अन्त में पशु का दम घुटने से पशु की मृत्यु हो जाती है।

### उपचार

1. सल्फामिडिन 30ml/50 kg wt. पर अन्तशिरा इन्जेक्शन प्रत्येक 6–6 घण्टे में 2 दिन तक देवें।
2. सूजन रोकने के लिये – प्रेडनीसोलोन 10–15 मिली. अन्तपेशी इन्जेक्शन।
3. दर्द के लिये – निमोवेट 15 मिली. अन्तपेशी इन्जेक्शन।
4. डेक्सोना – 10 मिली. अन्तपेशी इन्जेक्शन।
5. ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन – 30 मिली. अन्तपेशी इन्जेक्शन।

### रोग का नियंत्रण

1. प्रतिवर्ष बरसात से पूर्व मई–जून माह में एच.एस. (H.S.) का टीका लगावें।
2. पशु में पहला एच. एस. का टीका 6 माह की आयु में लगवायें।
   (i) एच. एस. टीका – 5 मिली. अन्तत्वचीय इन्जेक्शन।
   (ii) एच. एस. + बी. क्यू. संयुक्त टीका – 2 मिली. अन्तत्वचीय इन्जेक्शन।
   (iii) एच. एस. + बी.क्यू. + एफएमडी टीका – 2 मिली. गहरा अन्तत्वचीय इन्जेक्शन प्रतिवर्ष मई जून माह में।
3. मृत पशु को गाढ़ दें या जला दें।
4. स्वस्थ व बीमार पशुओं को अलग अलग रखें।
5. बीमार पशुओं के दूषित चारे व स्राव आदि को जला दें।

## थनैला रोग (Mastitis)

दुधारु पशुओं का यह एक संक्रामक रोग है। इस रोग में गादी/अयन गर्म, कठोर व पीड़ादायक हो जाता है और दूध की गुणवत्ता में फर्क आना शुरु हो जाता है। अगर इस समय पशु को इलाज दे दिया जाता है तो 2–3 दिन में पशु स्वस्थ हो जाता है अन्यथा गादी/अयन में कठोरता आना शुरु हो जाती है और अन्त में दूध आना भी बंद हो जाता है। थन या अयन हमेशा के लिये बेकार हो जाते है। इस रोग में पशु की मृत्यु नही होती है लेकिन दुग्ध उत्पादन पर बुरा असर पड़ने के कारण पशुपालक को बहुत ज्यादा आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। मानव स्वास्थ्य की दृष्टि से दूध के माध्यम से क्षय रोग, ब्रुसेल्लोसिस (गर्भपात) आदि जैसे रोग मनुष्य में फेलने की संभावना रहती है।

### संक्रमण फैलने का तरीका

1. थनों के दुग्ध मार्ग से संक्रमण थनों में जाता है।
2. पशु बाँधने की जगह का प्रायः गंदा होना व गंदे हाथों से दूध निकालने से।
3. दूध निकालने के बाद प्रायः दूध की बूंदे थन पर लगी होती है एवं जब पशु नीचे गंदे फर्श पर बैठता है तो संक्रमण हो जाता है।
4. थन या अयन को चोट लगने से।
5. गलत विधि से दूध निकालने पर।

### रोग कारक

यह रोग प्रायः जीवाणु, कवक व सुक्ष्म प्लाज्मा आदि से हो सकता है लेकिन मुख्य रुप से जीवाणु इसके लिये उत्तरदायी होते हैं। यह रोग देशी नस्ल की गायों की अपेक्षा संकर नस्ल की गायों में अधिक होता है। गाय, भैंस में अधिकतर स्ट्रैप्टोकोकाई एगैलेक्शिया (*Streptococci agalactiae*) जीवाणु द्वारा फैलता है प्रभावित अंग

इस रोग में थन व अयन प्रभावित होते है। थन/अयन पर सूजन व कठोरता आ जाने से दूध बनाने वाली कोशिकाएँ धीरे–धीरे खराब हो जाती है और पशु द्वारा दुग्ध उत्पादन कम या बंद हो जाता है।

### रोग के लक्षण

1. अयन या थन में सूजन, कठोरता एवं दर्द होना तथा हाथ लगाने पर गर्म महसूस होना।
2. दूध आना कम हो जाता है और दूध के रंग मे परिवर्तन होता है। पहले हल्का पीला फिर धीरे–धीरे लाल रंग का आने लगता है तथा अंत में दूध फटे दही जैसा आता है।
3. दूध से बदबू आना।
4. कभी–कभी थनों में गठानें पड़ना एवं रोगग्रस्त थन का सिकुड़ जाना अथवा छोटा हो जाना।
5. दूध छेने के पानी जैसा हो जाता है और उसमें दूध के थक्के, खून तथा मवाद (पस) के थक्के नजर आते हैं।

### उपचार

1. एण्टीबायोटीक सुबह शाम दें। इन्जेक्शन एम्पीसिलीन एवं क्लोकासिलीन 3 ग्राम –अन्तः पेशी दें।
2. फंगस एण्टीबायोटिक दें। इन्जेक्शन टाइसिन 15 मिली. –अन्तः पेशी दें।
3. दर्द व सूजन के लिये –इन्जेक्शन मेलोनेक्स 15 मिली. –अन्तः पेशी दें।
4. इन्जेक्शन एवील 10 मिली. –अन्तः पेशी दें।
5. संक्रमित थन से सारा दूध निकालकर मेस्टिटीस ट्यूब सुबह शाम थन में चढ़ावे, जरुरत होने पर थन में 5 मिली. ओ. टी. सी. भी चढ़ा दें।
6. गादी गर्म होने पर दिन में 5–6 बार ठण्डे पानी का छिड़काव करें तथा यदि गादी (अयन) ठण्डी हो तो गर्म पानी का छिड़काव करें।

### रोग से बचाव

1. पशुशाला तथा दूध निकालने वाला ग्वाला साफ–सुथरा होना चाहिए।
2. दूध दोहने के पहले व बाद में थनों को साफ पानी से धोना चाहिए।
3. दूध पूर्ण हस्त विधि व सही समय पर निकालना चाहिए।
4. थन या अयन के घाव या चोट का उपचार तुरन्त करवायें।
5. हमेशा स्वस्थ पशु का दूध पहले व रोगी पशु का दूध बाद में निकालें।
6. अयन में दूध बिल्कुल भी नही छोड़े।
7. पशुशाला की नियमित सफाई का ध्यान रखना चाहिए।

## टिक फीवर (Tick Fever)

टिक फीवर पशुओं में होने वाला एक बुखार है जो रक्त परजीवी बोओफिलस माइक्रोप्लस द्वारा फैलता है।

### रोग के लक्षण

1. भूख में कमी।
2. वजन घटना।
3. बुखार की अचानक शुरूआत।
4. खून की कमी।
5. दूध उत्पादन में कमी

### रोकथाम एवं उपचार

- रोगी पशुओं को स्वस्थ पशुओं से दूर रखना चाहिए।
- जिस स्थान पर टिक बुखार का प्रकोप हो उस स्थान के आस–पास की वनस्पति आदि को जला देना चाहिए।
- पशुशाला में विभिन्न कीटनाशी दवाओं का समय–समय पर पशु चिकित्सक की सिफारिश के अनुसार छिड़काव करवाना चाहिए।
- ब्यूटॉक्स का छिड़काव पशु चिकित्सक की सिफारिश के अनुसार करना चाहिए।

## दुग्ध ज्वर (Milk Fever / Hypocalcemia)

यह एक चयापचयी (Metabolic) रोग है जो गाय, भैसों में ब्याने के कुछ समय पहले या ब्याने के कुछ समय बाद होती है। इसमें पशु के शरीर में कैल्शियम की भारी कमी हो जाती है। माँसपेशियाँ कमजोर हो जाती है। शरीर में रक्तचाप की काफी कमी हो जाती है। अन्त में पशु काफी सुस्त, बेहोश सा तथा निढाल हो जाता है। प्रायः दूध ज्वर अधिक दूध देने वाली संकर गाय, भैसों में अधिक होता है। यह रोग अधिकतर ब्याने के 5–7 दिन के अन्दर हो जाता है। इस रोग में पशु का सामान्य तापमान कम हो जाता है। सामान्य रुप से गाय, भैसों के सीरम में कैल्शियम लेवल 9–11 mg/100ml होता है। इस रोग में यह स्तर घटकर 7% हो जाता है।

### रोग का कारण

1. रक्त सीरम (Blood Serum) में कैल्शियम स्तर 7 mg/100 ml. से कम होना।
2. रक्त में कैल्शियम की कमी प्रमुख चार कारणों से होती है।
   (अ) ब्याने के बाद काफी मात्रा में कैल्शियम खीस (कोलस्ट्रम) के साथ बाहर आ जाता है। खीस में रक्त से 12–13 गुना अधिक कैल्शियम होता है।
   (ब) ब्याने के बाद एकाएक खीस में बहुत ज्यादा कैल्शियम निकल जाने के कारण हड्डियों से शरीर को कैल्शियम जल्दी नही मिल पाता है।
   (स) यदि ब्याने के बाद पशु को कम मात्रा में आहार दिया जाता है तो रुमन व आंतों में भी कम आहार होने से ये अंग कम सक्रिय होने और कैल्शियम का अवशोषण भी कम होगा। थके हुये व भूखे पशुओं में दूध ज्वर जल्दी होता है।
   (द) आहार में कैल्शियम की कमी का होना।

### रोग के लक्षण

1. पहले पशु सुस्त और धीरे–धीरे कमजोर या ढीला हो जाता है।
2. पशु अपनी गर्दन को पेट की ओर मोड़कर निढाल सा बैठा रहता है।
3. शरीर का तापमान सामान्य से थोड़ा कम हो जाता है पशु के हाथ लगाने पर पशु ठण्डा महसूस होता है।
4. आँखें सुख जाती है, आँखों की पुतलियां फैलकर बड़ी हो जाती है।
5. रोग होने के 2–3 दिन बाद पशु में चलने फिरने तक की क्षमता नही रहती है तथा वह एक जगह बेहोशी की अवस्था में पड़ा रहता है।
6. मांसपेशियां कमजोर हो जाने के कारण पशु गोबर व पेशाब करने में असमर्थ हो जाता है।

### उपचार

1. रक्त में कैल्शियम की कमी दूर करने के लिये तुरन्त रक्त में कैल्शियम बोरो ग्लूकोनेट 500 मिली. का अन्तशिरा इन्जेक्शन लगावें।
2. अगर कभी कभी कैल्शियम के साथ मैग्निशियम की भी कमी हो तो कैल्शियम मैग्निशियम बोरो ग्लूकोनेट 500 मिली. का अन्तशिरा इन्जेक्शन पशु चिकित्सक की सिफारिश से लगावें।

### रोग से बचाव

1. पशु को कैल्शियम युक्त आहार खिलावें।
2. पशु को ब्याने के पूर्व से ही विटामिन की खुराक देना शुरु कर दें।
3. ब्याने के पूर्व ही पशु को कैल्शियम युक्त (Calcium Rich) दाना खिलाना शुरु कर देना चाहिए।
4. प्रतिदिन 50–60 ग्राम खनिज लवण खिलावें।

## फड़किया रोग (Enterotoxemia)

यह अधिकतर रोमन्थी पशुओं में होने वाला रोग है इस रोग में जीवाणु आंतों में पहुँचकर जहर (Toxin) पैदा करते है जिसके कारण इस रोग के लक्षण प्रकट होते है। यह रोग प्राय भेड़ व बकरियों में ज्यादा पाया जाता है जो एक जानलेवा घातक बीमारी है। इस रोग में एक साथ बड़ी संख्या में भेड़ व बकरियाँ मर जाती है।

### संक्रमण फैलने का तरीका

1. संक्रमित चारे, दाने व पानी के उपयोग से यह जीवाणु पशु की आँतों में रहता है तथा गोबर के माध्यम से चारागाह व पानी के स्रोतों को दूषित कर रोग फैलाता है।

### रोग कारक –

यह रोग क्लोस्ट्रीडियम परफ्रिन्जेन्स नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। यह जीवाणु अपनी अलग अलग प्रजातियों के हिसाब से अलग अलग जाति पशुओं में रोग फैलाता है। इसकी मुख्य प्रजातियाँ ए, बी, सी, डी, व ई हैं। इनमें डी प्रजाति सबसे खतरनाक होती है क्योंकि इनसे उत्पन्न जहर खतरनाक होता है। यह प्रजाति भेड़, बकरियों में रोग फैलाती है।

### प्रभावित अंग

यह जीवाणु आहार नाल द्वारा प्रवेश कर पशु की आँतों मे निवास करता है तथा यहीं पर विष बनाता है।

### रोग के लक्षण

1. पेट में दर्द होने के कारण भेड़ या बकरी बैचेन हो जाती है और बार बार उठती या बैठती है।
2. पशु को आफरा आ जाता है व सांस लेने में तकलीफ होती है।
3. हाथ, पैरों में ऐंठन, अगले पैरों के घुटने के बल पर चलता है।
4. पेट दर्द के कारण पशु दाँत किटकिटाता है।
5. इस रोग में भेड़ें रात को स्वस्थ होती परन्तु सुबह मरी हुई मिलती हैं।
6. आँखो से आँसू तथा मुँह से झाग निकलते है।
7. अन्त में खूनी दस्त होती है तथा लेटे–लेटे पैरों को साईकिल की तरह चलाते हुए मृत्यु हो जाती है।

### उपचार

1. डेक्सोना 3 मिली. अन्तपेशी इन्जेक्शन
2. एण्टीबायोटीक दें – इन्जेक्शन ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन (O.T.C.)-5 मिली. अन्तपेशी तीन दिन तक ।
3. पेट दर्द को रोकने व ऐठन कम करने के लिये – इन्जेक्शन डाई क्लोमिन हाइड्रोक्लोराइड 3 मिली. अन्तपेशी देना।
4. मांसपेशियों की अकड़न रोकने के लिये – इन्जेक्शन न्यूरोबियोन 3 मिली. अन्तपेशी इन्जेक्शन देवें।

### रोग से बचाव

1. ई. टी. वी. का टीका लगावें।
2. ई.टी. वी. प्रकार डी – 2.5 मिली. अन्तत्वचीय या अन्तपेशीय।
3. मृत पशु को गाढ़ दें तथा इसके स्त्राव, बिछावन आदि को जला दें।
4. बीमार पशुओं को तुरन्त अलग कर दें।
5. जिस क्षेत्र में बीमारी का प्रकोप ज्यादा हो उस क्षेत्र में भेड़ों को चराने ना ले जावें।

## सर्रा (Surra)

यह बुखार की एक बीमारी है। जिसमें पशु को तेज बुखार रूक– रूक कर आता रहता है। जिसमें पशु चक्कर काटता है और उत्तेजित हो जाता है। यह बीमारी हर प्रकार के पशु को प्रभावित करती है।

**रोग का कारण–** यह बीमारी ट्रिपेनोसोमा ईवनसाई नामक प्रोटोजोवा से होती है। यह रक्त परजीवी है जो मक्खियों द्वारा फैलता है।

रोग के लक्षण

1. **अधिक तीव्र रूप** – एकाएक तेज बुखार आता है। उत्तेजना होती है। पशु इधर–उधर भागता है। वह नशीला सा लगता है तथा अपने सिर को दीवार या जमीन पर मारता है। खाना–पीना छोड़ देता है और शीघ्र मर जाता है।
2. **तीव्र रूप** – बुखार का न होना, गोले में चक्कर लगाना, खड़े रहना, कभी खाना, कभी न खाना, जुगाली कम करना, बंध–बंधासा चलना, पसीना आना तथा गिर पड़ना इस रोग के मुख्य लक्षण हैं।
3. **कम तीव्र होना** – इसमें बुखार नही आता परन्तु पशु पागल की तरह घूमता है। खाना–पीना छोड़ देता है और उसको कब्ज हो जाता है। वह दुर्बल व शक्तिहीन होकर गिर जाता है और 2 से 3 सप्ताह के बीच मर जाता है।

### रोकथाम एवं उपचार

1. चिकित्सा – इंजेक्शन एण्ट्रीसाइडप्रोसाल्ट 2.5 से 3 ग्राम दवा 15 मिली. डिस्ट्रीलड वाटर में घोल कर चमड़ी में लगाना चाहिए।
2. इंजेक्शन बेरेनिल 5 ग्राम को 25 मिली डिस्ट्रील वाटर में घोलकर चमड़ी में लगाना चाहिये ।
3. इन्जेक्शन ट्राईक्वीन 2.5 ग्राम को 15 मिली. डिस्ट्रील वाटर में घोलकर चमड़ी में लगाना चाहिये ।
4. पशु को एनोरेक्सन फोर्ट गोली या प्रोमीन एच.एस. की दो–दो गोलियाँ सुबह शाम देनी चाहिए ।
5. इन्जेक्शन टोनाफास्फोन 10 मिली. व सी.बी.जी. 500 मिली नस में देनी चाहिए ।

### खाज (Mange) व खुजली (Scabies)

यह छूतदार चर्म रोग है यह माइटस नामक परजीवी से उत्पन्न होता है जो चमड़ी के अन्दर घुसकर अपना असर करते है जो कि एक पशु से दूसरे पशु में शीघ्रता से फैलती है।

रोग के लक्षण – शरीर पर सूजन आना, फुन्सियाँ होना एवं शरीर के बालों का गिरना इस रोग के प्रमुख लक्षण है इस रोग में चमड़ी का रंग लाल हो जाता है और पशु शरीर को खुजलाता रहता है। सभी पशुओं में इस बीमारी के लक्षण एक ही समान होते है। यह बीमारी चेहरे, होंठ और पैरों से आरम्भ होती है तथा सिर, गर्दन एवं पुट्ठे तक पहुँच जाती है। पूँछ की जड़ पर भी यह रोग बहुत होता है। त्वचा सूजकर मोटी होने लगती है। खुजाने पर उसी स्थान से पीप सा निकलने लगता है। गीली खुजली में छाले होकर फूट जाते है जिससे पशु को दर्द होता है

रोग के कारण – यह रोग चार प्रकार के कीटाणुओं द्वारा फैलता है जो निम्न है–

1. सोरप्टिस कम्युनिस *(Psorpties communis)*
2. कोरीओप्टिससिंबोइटिस *(Corioptic symbiotes)*
3. डेमोडेक्स फौलीक्युलोरम *(Demodex fllolicullorum)*
4. सारकौप्टिस स्कैबी *(Sarcoptes scabiei)*

### रोकथाम एवं उपचार

- सभी रोगग्रस्त पशुओं के बांधने के स्थान को अच्छी प्रकार से रोगाणु रहित कर देना चाहिए।
- रोगी पशु को अन्य पशु से अलग कर दें।
- सल्फर पाउडर को तेल में मिलाकर लगावें ।
- हिमेक्स मल्हम लगावें ।
- बुटाक्स 5 मिली को 1 लीटर पानी में घोलकर शरीर पर लगावें।
- इन्जेक्शन आवरमेक्टिन 1 मिली. प्रति 50 किग्रा वजन के हिसाब से चमड़ी में लगावें ।

### महत्वपूर्ण बिन्दु (Important Points)

- पशु प्लेग वायरस द्वारा फैलने वाला बहुत ही भयानक संक्रामक रोग है।
- खुरपका–मुँहपका रोग में सबसे पहले पैरों मे छाले होने शुरु हाते है और बहुत से वायरस पैदा हो जाते हैं। जब इन घाव को पशु जीभ से चाटता है तब मुँह में भी छाले हो जाते हैं। इसलिये इस रोग को खुरपका–मुँहपका रोग कहते है।
- जहरबाद रोग क्लोस्ट्रीडियम शोवियाई नामक जीवाणु द्वारा फैलता है।
- गलघोटू रोग में पशु को सांस लेने में तकलीफ होती है

सारणी 14 .1 : टीकाकरण

| क्र. सं. | टीके का नाम | बछड़ों की आयु | टीके की मात्रा | टीका लगाने का स्थान | पुनः टीकाकरण |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 | एच. एस. वेक्सीन | 3 माह | 5 मिली. | त्वचा | प्रतिवर्ष |
| 2 | बी. क्यू. वेक्सीन | 3 माह | 5 मिली. | त्वचा | प्रतिवर्ष |
| 3 | एफ. एम. डी. वेक्सीन | 6 माह | 2 मिली. | त्वचा | वर्ष में दो बार |
| 4 | ई.टी. वेक्सीन | 3 माह | 2.5 मिली. | त्वचा | प्रतिवर्ष |
| 5 | ब्रुसेलिस सी. – 19 वेक्सीन | 3 माह (मादा बछड़ों में) | 5 मिली. | त्वचा | जीवन में एक बार |
| 6 | आर. पी. वेक्सीन | 6 माह | 1 मिली. | त्वचा | 3 वर्ष में एक बार |
| 7 | पी. पी. आर. वेक्सीन | 3 माह (भेड़, बकरी) | 1 मिली. | त्वचा | प्रतिवर्ष |
| 8 | एन्थ्रेक्स स्पेयर वेक्सीन | 3 माह | 1 मिली. | त्वचा | प्रतिवर्ष |

और घर्र–घर्र की आवाज आती है।

- थनैला रोग देशी नस्ल की गायों की अपेक्षा संकर नस्ल की गायों में अधिक होता है।
- दुग्ध ज्वर एक चयापचयी (Metabolic) रोग है।
- सर्रा रोग नामक बीमारी *ट्रिपेनोसोमा ईवनसाई* नामक प्रोटोजोवा से होती है।

टीके रोग विशेष के लिये वर्ष में 1 बार या 2 बार लगाये जाते हैं। अर्थात् टीकाकरण करने का सबसे उपयुक्त समय मई–जून एवं नवम्बर–दिसम्बर माह होता है। टीके द्वारा रोग से लड़ने की क्षमता 6 माह या 1 वर्ष की होती है। अतः 6 माह या 1 वर्ष बाद पुनः नियमित टीकाकरण करवायें।

**नोट –गाय भैंस के 3 माह से छोटे बछड़ों को टीके नही लगायें तथा भेड़ बकरी में 2 माह से कम के मेमनों में टीकाकरण नहीं करें।**

## अभ्यासार्थ प्रश्न

### बहुचयनात्मक प्रश्न

1. सर्रा बीमारी का कारण है –
   (अ) जीवाणु (ब) विषाणु
   (स) प्रोटोजोआ (द)उपर्युक्त में से कोई नहीं
2. थनैला रोग किसके द्वारा फैलता है?
   (अ) जीवाणु (ब)विषाणु
   (स) प्रोटोजोआ (द)उपर्युक्त में से कोई नहीं
3. दुग्ध ज्वर किसकी कमी के कारण होता है?
   (अ) जिंक (ब) कैल्शियम
   (स) आयरन (द) मैंगनीज
4. कौनसा रोग होने पर पशु घर्र–घर्र की आवाज करता है?
   (अ) थनैला (ब)सर्रा
   (स) दुग्ध ज्वर (द)गलघोटू
5. दुग्ध ज्वर रोग है।
   (अ) जीवाणु (ब) चयापचयी
   (स) विषाणु (द)कोई नहीं
6. पशु प्लेग रोग किसके द्वारा फैलता है?
   (अ) विषाणु (ब)जीवाणु
   (स) प्रोटोजोआ (द)कोई नहीं
7. खुरपका–मुँहपका रोग किसके द्वारा फैलता है?
   (अ) विषाणु (ब)जीवाणु
   (स) उपर्युक्त दोनों (द)कोई नहीं

### अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. खुरपका–मुँहपका रोग कौनसे वायरस द्वारा फैलता है?
2. सर्रा बीमारी का प्रमुख लक्षण क्या है?
3. पशु प्लेग किस कारण से फलता है?
4. खुजली के प्रमुख लक्षण लिखिए।
5. स्वस्थ पशु के लक्षण लिखिए।
6. जहरबाद रोग कौनसे जीवाणु द्वारा फैलता है?
7. एन्थ्रेक्स रोग के प्रमुख लक्षण लिखिए।
8. खुरों के बीच किस रोग में छाले पड़ते है? उपचार लिखिए।

### लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. निम्न बीमारियों के कारण लक्षण एवं उपचार लिखिए।
   (अ) थनैला (ब) खुरपका– मुँहपका
2. गलघोंटू रोग के लक्षण एवं उपचार का वर्णन कीजिए।
3. जहरबाद रोग के मुख्य लक्षण लिखिए।
4. गलघोंटू रोंग के रोग कारक एवं रोकथाम के उपाय का वर्णन कीजिए।
5. थनैला रोग से बचाव के उपाय लिखिए।
6. फड़किया रोग के लक्षण लिखिए।
7. एन्थ्रेक्स व जहरबाद के लक्षणों में तुलना कीजिए।

### निबन्धात्मक प्रश्न

1. पशु माता रोग का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2. दुग्ध ज्वर क्या है?विस्तारपूर्वक समझाइये।
3. निम्न बीमारियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
   अ. सर्रा ब. खाज व खुजली
   स. फड़किया द. टिक फीवर
4. एन्थ्रेक्स रोग के कारण, लक्षण, उपचार व रोकथाम लिखिए।
5. जहरबाद रोग का सविस्तार वर्णन कीजिए।

### उत्तरमाला

स 2. अ 3. ब 4. द 5. ब 6. अ 7. अ

# अध्याय – 15
# दुग्ध विज्ञान (Dairy Science)

## भारत में दुग्ध उद्योग का विकास (Development of Milk Industry in India)

भारतवर्ष में आजादी के बाद दुग्ध उत्पादन में प्रशंसात्मक वृद्धि हुई है। आज विश्व के दुग्ध उत्पादक देशों में भारत का प्रथम स्थान है। सन् 1951 में जब देश का कुल दुग्ध उत्पादन 17 मिलियन टन था जिसमें अब 9.5 गुना वृद्धि करके वर्ष 2017 में यह 163.7 मिलियन टन हो गया है। इसमें 49 प्रतिशत उत्पादन भैंसों से, 20 प्रतिशत देशी गायों से, 27 प्रतिशत विदेशी गायों से तथा शेष हिस्सा बकरी व अन्य पशुओं का आता है। भारत का विश्व दुग्ध उत्पादन में 18.5 प्रतिशत हिस्सा है।

राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के अनुसार वर्ष 2016–17 में दूध की प्रति व्यक्ति उपलब्धता 352 ग्राम प्रतिदिन है। जो वैश्विक औसत से अधिक है। भारत की दुग्ध उत्पादन वृद्धि दर 5.3 प्रतिशत वार्षिक है जो वैश्विक वृद्धि दर 2.2 प्रतिशत से दुगुनी है।

खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) के आँकड़ों के अनुसार वर्ष 2013 में शीर्ष दुग्ध उत्पादन राष्ट्र एवं वैश्विक दुग्ध उत्पादन में हिस्सा निम्न क्रमानुसार है। भारत–18%, संयुक्त राज्य अमेरिका 12%, ब्राजील एवं चीन–5%, व रूसी संघ– 4% है।

डेयरी ग्रामीण परिवारों के लाखों लोगों के लिए आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है और विशेष रूप से सीमान्त किसानों और महिलाओं के लिए रोजगार और आय सृजन के अवसर उपलब्ध कराने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (1975) के अनुसार प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कम से कम 280 ग्राम दूध उपलब्ध होना जरूरी है जबकि प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता अलग–अलग समय पर अलग–अलग होती रही है जो कि **तालिका 15.1** में दर्शायी गई है।

**तालिका सं. 15.1** भारत में दुग्ध उत्पादन एवं प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन उपलब्धता

| वर्ष दुग्ध उपलब्धता | उत्पादन (दस लाख टनों में) | प्रति व्यक्ति (ग्राम प्रतिदिन) |
|---|---|---|
| 1950–51 | 17.0 | 130 |
| 2014–15 | 146.3 | 322 |
| 2015–16 | 155.5 | 337 |
| 2016–17 | 163.7 | 352 |

स्रोतः बुनियादी पशुपालन और मत्स्य पालन के आँकड़े – 2017

हमारे यहाँ पर दुग्ध उत्पादन के लिए गाय, भैंस, भेड़, बकरी पाली जाती है। लेकिन व्यवसायिक स्तर पर दूध का उत्पादन करने वाले पशु गाय एवं भैंस ही माने जाते हैं। भारत में गौवंश की संख्या अधिक होते हुए भी दुग्ध उत्पादन काफी कम है। संसार के अन्य देशों में अच्छी नस्ल की गाय पाई जाती है। जिनका दुग्ध उत्पादन अपेक्षाकृत अधिक होता है। हमारे देश में सबसे उत्तम नस्ल की भैंस पाई जाती हैं जिनके दूध में वसा एवं वसा रहित ठोस पदार्थ अधिक मात्रा में पाया जाता है। लेकिन इन भैंसों का दुग्ध उत्पादन उन्नत नस्ल की गायों की अपेक्षा काफी कम है। अतः ये आवश्यक है कि हम भविष्य की माँग के अनुसार ही अपने पशुधन को विकसित करें जिससे हम अपने देश की बढ़ती हुई जनसंख्या की दूध की माँग को पूरा कर सकें।

### भारतीय गायों की दुग्ध उत्पादन क्षमता

भारत में 190.90 मिलियन गायें पाली जाती हैं। जो कि संसार की कुल गायों का लगभग 16.5 प्रतिशत है। एक भारतीय गाय का एक वर्ष का औसतन दुग्ध उत्पादन 1600 कि.ग्रा. है।

प्रति पशु दुग्ध उत्पादन का इतना बड़ा अन्तर होने का मुख्य कारण है कि विदेशों में नस्ल सुधार कार्य पिछले अनेक वर्षों से किये जा रहे हैं। इसलिए वहाँ के वैज्ञानिक अपने पशुओं में अच्छे उत्पादन गुण स्थाई रूप से स्थापित कर चुके हैं। लेकिन भारत में अभी पशु नस्ल सुधार किया जा रहा है जिसके अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

### भारत में दुग्ध उत्पादन की आवश्यकता एवं विकास कार्य

विश्व के दुग्ध उत्पादक देशों में भारत का पहला स्थान है। लाखों ग्रामीण परिवारों के लिए दुग्ध व्यवसाय आय का दूसरा महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है। रोजगार प्रदान करने और आय के साधन पैदा करने में दुग्ध व्यवसाय की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई है।

भारत सरकार ने अनेक पशु विकास कार्यक्रम शुरू किये हैं जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

(अ) प्रति पशु उत्पादन में वृद्धि–इसके लिए पशुओं में नस्ल सुधार एवं संकरण आवश्यक है। इसके लिए निम्नलिखित योजनाएँ चलाई जा रही है।

**(1) सघन पशु विकास योजना (I.C.D.P.)–** इस योजना के विकास के अन्तर्गत प्रत्येक योजना में 1 लाख प्रजनन योग्य मादा पशुओं को चुना जाता है। इन पशुओं के लिए नियंत्रित प्रजनन, संतुलित आहार तथा रोग नियंत्रण की पूर्ण सुविधा दी जाती है। इस प्रकार अनेक केन्द्र चलाये जा रहे हैं।

**(2) उन्नत नस्लों के विदेशी सांडों से संकरण–** उन्नत नस्ल के विदेशी सांडों से स्थानीय गायों को प्राकृतिक विधि से प्रजनित कराकर नस्ल सुधार किया जाता है। जिससे स्थानीय पशु का दुग्ध उत्पादन कई गुना बढ़ जाता है।

**(3) कृत्रिम गर्भाधान–** भारत सरकार एवं राज्य सरकारों ने अनेक स्थानों पर कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र खोलकर नस्ल सुधार किया है। कृत्रिम गर्भाधान की पशु विकास एवं नस्ल सुधार में अच्छी भूमिका रही है।

**(4) भ्रूण स्थानान्तरण तकनीक–** भ्रूण स्थानान्तरण तकनीक में अधिक दुग्ध उत्पादन क्षमता वाली गाय से निषेचित अण्डे एकत्रित करके दूसरे पशुओं के गर्भाशयों में रख दिये जाते हैं। इस तकनीक से 12–18 महीने में एक उत्तम नस्ल की गाय से 25 बच्चे प्राप्त किये जा सकते हैं। जबकि सामान्य प्रजनन विधि से मात्र एक बच्चा ही प्राप्त होता है। आनुवांशिक सुधार के लिए यह तकनीक बहुत ही कारगर सिद्ध हुई है।

**(5) विभिन्न राज्यों में नस्ल सुधार योजनायें–** कई राज्यों में नस्ल सुधार की कुछ योजनायें चलाई जा रही हैं जैसे–

**(i) इन्डो–डेनिस प्रोजेक्ट–** यह प्रोजेक्ट हेरिगांढा (कर्नाटक) में चलाया जा रहा है। इसमें स्थानीय नस्ल की गायों का रेड–डेन नस्ल के सांडों से संकरण कराया जाता है।

**(ii) इन्डो–जर्मन प्रोजेक्ट–** यह प्रोजेक्ट मंडी (हिमाचल) तथा अल्मोडा (यू.पी.) में चलाये गये थे। इसमें जर्मन नस्ल हाईलैंड एवं ब्राउन स्विस के वीर्य से स्थानीय नस्ल की गायों में गर्भाधान कराया गया था।

**(iii) इन्डो– स्विस प्रोजेक्ट–** यह प्रोजेक्ट पटियाला में चलाया गया था। जिसमें ब्राउन स्विस की नस्ल से हरियाणा और साहीवाल गायों को प्रजनित कर के नस्ल सुधार किया गया था।

**(6) संतती परीक्षण–** प्रत्येक राज्य में अच्छी नस्ल के सांडों से गायों को गर्भित कराकर उनसे पैदा होने वाली बछियों का अच्छी तरह पालन पोषण करके उनका दुग्ध उत्पादन देखकर, उनको अगली पीढ़ी तैयार करने के लिए रखा जाता है।

**(7) गौशाला एवं चारा विकास योजना–** प्रत्येक राज्य में बेकार व आवारा पशुओं को गौशालाओं में रखने की योजना शुरू की गई जिसमें पशु का अच्छी तरह से पालन–पोषण कर उत्पादन बढाया जा सके।

**(8) "की" विलेज (Key Village) योजना –** प्रत्येक पंच वर्षीय योजना में पूरे देश में पशु विकास के लिए यह योजना शुरू की गई जिसमें पशु का अच्छी तरह से पालन–पोषण कर उत्पादन बढ़ाया जा सके।

**(9) सहकारी डेयरी–** पूरे देश में राज्य स्तर पर सहकारी डेयरियाँ स्थापित की गई। जिनका डेयरी विकास में बहुत बड़ा योगदान है। डेयरी की समस्याओं के समाधान के लिए राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड गठित किया गया।

**राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (National Dairy Development Board) –** राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड की स्थापना सन् 1965 में की गई। उसका मुख्यालय आनन्द (गुजरात) में स्थापित है और इसके क्षेत्रीय कार्यालय दिल्ली, कोलकाता, बैंगलोर, मुम्बई तथा चेन्नई में स्थापित हैं। संसार की यह सबसे बड़ी डेयरी योजना थी भारत में जिसे आपरेशन–फ्लड के नाम से जाना जाता है।

**भारतीय डेयरी निगम (Indian Dairy Corporation) –** भारत सरकार ने 13 जनवरी 1970 में भारतीय डेयरी निगम की स्थापना की थी। यह निगम ऑपरेशन फ्लड एवं अन्य डेयरी विकास योजना को संचालित करने में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड की एक कड़ी के रूप में कार्य करता है।

**श्वेत क्रांति (White Revolution) –** डेयरी के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होने के लिए "श्वेत क्रांति" का सूत्रपात किया गया।

**ऑपरेशन–फ्लड (Operation Flood) –** ऑपरेशन–फ्लड योजना को तीन चरणों में चलाया गया था।

**ऑपरेशन–फ्लड प्रथम चरण (1970)–** ऑपरेशन–फ्लड प्रथम सन् 1970 में शुरू हुआ, इसके अन्तर्गत जो सप्रेटा दुग्ध चूर्ण तथा बटर ऑयल विदेशों से अनुदान के रूप में प्राप्त हुआ था, उससे दूध तैयार करके, दूध को दिल्ली, मुम्बई, कलकत्ता एवं मद्रास (चेन्नई) में बेचा गया। ऑपरेशन फ्लड प्रथम चरण काफी सफल रहा, इसकी सफलता इस बात से स्पष्ट होती है कि ऑपरेशन फ्लड के शुरू में प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता 105 ग्राम थी। जो अंत में प्रति व्यक्ति 122 ग्राम तक पहुँच गई थी।

**ऑपरेशन फ्लड द्वितीय चरण (Operation Flood II) –** यह योजना 1 जुलाई, 1978 को प्रारंभ हुई और इसका समापन 1985 में हुआ।

ऑपरेशन फ्लड के कार्यान्वित के दौरान जो कमियाँ रह गई थी उन्हें पूरा करने के लिए 1993–94 में शत–प्रतिशत अनुदान के आधार पर एकीकृत डेयरी विकास कार्यक्रम (आईडीडीपी) नाम से एक नई योजना शुरू की गई। यह योजना कुछ क्षेत्रों में विशेष रूप से लागू की गई जो ऑपरेशन फ्लड में आने से छूट गये थे। इसके साथ ही पहाड़ी और पिछड़े क्षेत्रों में

भी इसको अमल में लाया गया। इस योजना के मुख्य उद्देश्य थे – दुधारू मवेशियों का विकास, तकनीकी सहायता उपलब्ध कराकर दुग्ध उत्पादन में वृद्धि, दूध की सरकारी खरीद और किफायती ढंग से उसका प्रसंस्करण और विपणन, दुग्ध उत्पादक को उचित मूल्य दिलाना, रोजगार के अतिरिक्त अवसरों का सृजन और अपेक्षाकृत वंचित क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की सामाजिक, आर्थिक और पौष्टिक स्थिति में सुधार लाना।

12वीं पंचवर्षीय योजना में नेशनल लाइवस्टॉक मिशन की शुरूआत की गई। जिसके तहत पशुओं हेतु दाना एवं चारा की उपलब्धता को बढ़ावा देना एवं उपलब्धता एवं माँग के बीच के अन्तर को कम करना। इस योजना के अन्तर्गत पशुओं के बीमारियों के नियंत्रण हेतु राष्ट्रीय नियंत्रण कार्यक्रम प्रमुख बीमारियों जैसे खुरपका–मुँहपका (FMD), पी.पी.आर, (Peste des petits ruminants) ब्रूसीलोसिस (माल्टा ज्वर), क्लासिकल स्वाइन ज्वर (CSF) के लिए किया गया।

तदुपरान्त सरकार दुग्ध व्यवसाय को लोकप्रिय बनाने और इससे जुड़े पहले छूट गये अन्य क्षेत्रों को सम्मिलित करने के लिए राष्ट्रीय मवेशी (गोधन) और भैंस प्रजनन परियोजना, सघन डेयरी विकास कार्यक्रम, गुणवत्ता सूचना सुद्रणीकरण एवं स्वच्छ दुग्ध उत्पादन, सहकारिताओं को सहायता, डेयरी पोल्ट्री वेंचर कैपिटल फंड, पशु आहार, चारा विकास योजना और पशुधन स्वास्थ्य और रोग नियंत्रण कार्यक्रम जैसी अनेक योजनाओं पर काम कर रही है।

### राजस्थान में डेयरी का विकास–

राजस्थान में ग्रामीणों का पशुपालन एक मुख्य व्यवसाय है, जिससे ग्रामीणों की सामाजिक–आर्थिक स्तर एवं पोषण आवश्यकता की भी पूर्ति होती है। राजस्थान में कुल दूध उत्पादन 16,934 हजार मी. टन है तथा देश में दूध उत्पादन में दूसरा स्थान (कुल दूध उत्पादन का 11.8 प्रतिशत हिस्सा) है, जिसमें 53 प्रतिशत भैंसों से 36 प्रतिशत गायों से तथा 1 प्रतिशत बकरियों से प्राप्त होता है। राजस्थान में जैसलमेर में सबसे अधिक दुग्ध उपलब्धता 1085 ग्राम प्रति व्यक्ति है।

राजस्थान को–ऑपरेटिव डेयरी फेडरेशन 1977 में स्थापित हुआ और तब से समस्त 32 जिलों को डेयरी फेडरेशन द्वारा डेयरी से संबंधित उत्पादन, विपणन एवं विकास कार्यों का सफलतापूर्वक संचालन कर रहा है। वर्तमान (2016–17) में राज्य में 21 दुग्ध सहकारी संघ कार्य कर रहे हैं। इन संघों के अन्तर्गत ग्रामीण स्तर पर 14193 दुग्ध–सहकारी समितियाँ कार्यरत हैं, जिनमें से 5699 महिला दुग्ध–सहकारी समितियाँ हैं।

### महत्वपूर्ण बिन्दु–

1. राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के अनुसार वर्ष 2016–17 में दूध की प्रति व्यक्ति उपलब्धता 352 ग्राम प्रतिदिन है।
2. दूध का उत्पादन जो सन् 1951 में 170 लाख टन था उसे सन् 2017 में 1637 लाख टन तक पहुँचा दिया है।
3. विदेशी नस्ल के साँडों से देशी नस्ल की गाय प्रजनित कराकर अच्छी नस्ल की गायें तैयार की गई। जिनका दुग्ध उत्पादन 2 से 4 गुना तक पहुँच गया।
4. भारत का विश्व दुग्ध उत्पादन में 18.5 प्रतिशत हिस्सा है।
5. भारत में 190.90 मिलियन गायें पाली जाती हैं, जो कि संसार की कुल गायों का लगभग 16.5 प्रतिशत है।
6. दुग्ध सहकारी समितियों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने से महिलाओं की रूचि पशुपालन में बढ़ी है। जिसके कारण दुग्ध उत्पादन भी बढ़ा है।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

### बहुचयनात्मक प्रश्न

1. वर्ष 2016–17 में भारत में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन की दुग्ध उपलब्धता कितने ग्राम प्रतिदिन है?
   (अ) 352 (ब) 320
   (स) 382 (द) 220
2. वर्ष 2013 में वैश्विक दुग्ध उत्पादन में भारत का हिस्सा है–
   (अ) 12 प्रतिशत (ब) 18 प्रतिशत
   (स) 5 प्रतिशत (द) 4 प्रतिशत

### अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

3. भारतीय चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के अनुसार प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कितना दूध उपलब्ध होना चाहिए?
4. ऑपरेशन फ्लड प्रथम कब शुरू हुआ?
5. एन.डी.डी.बी. की स्थापना कब हुई?

### लघूत्तरात्मक प्रश्न–

6. भारतीय डेयरी निगम पर टिप्पणी लिखिए।
7. राजस्थान में डेयरी के विकास के बारे में लिखिए।

### निबन्धात्मक प्रश्न–

8. भारत में दुग्ध उत्पादन की आवश्यकता एवं विकास कार्य का वर्णन कीजिए।

### उत्तरमाला

1. (अ) 2. (ब)